* ॐ श्रीपरमात्मने नमः *

कल्याण

मूल्य १० रुपये

वर्ष ९३

गीताप्रेस, गोरखपुर

संख्या १२

जरासन्धकी कैदसे राजाओंकी मुक्ति

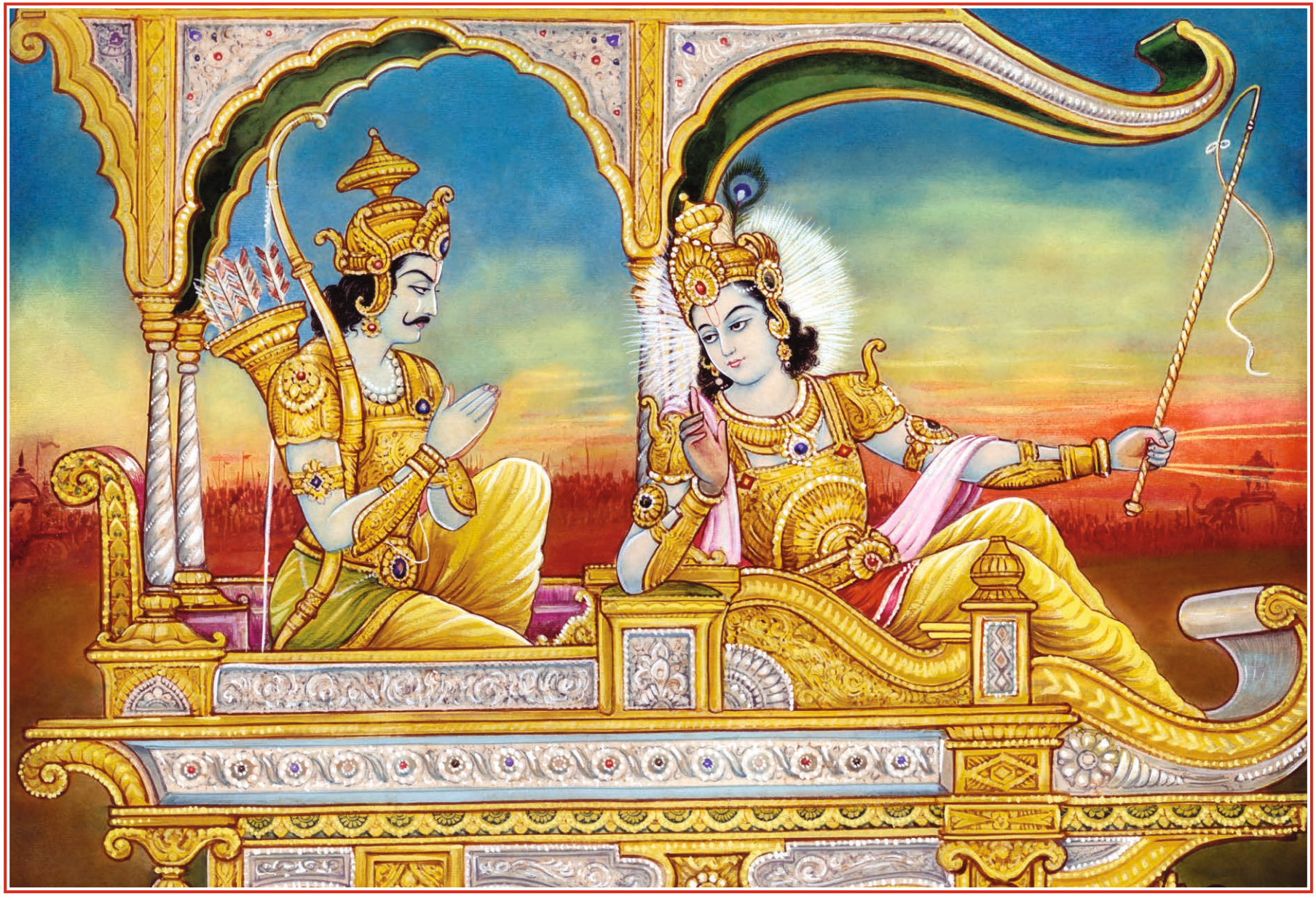

भगवान् श्रीकृष्णका अर्जुनको प्रबोधन

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

कल्याण

यज्जापः सकृदेव गोकुलपतेराकर्षकस्तत्क्षणाद्यत्र प्रेमवतां समस्तपुरुषार्थेषु स्फुरेत्तुच्छता।
यन्नामाङ्कितमन्त्रजापनपरः प्रीत्या स्वयं माधवः श्रीकृष्णोऽपि तदद्भुतं स्फुरतु मे राधेति वर्णद्वयम्॥

वर्ष ९३ | गोरखपुर, सौर पौष, वि० सं० २०७६, श्रीकृष्ण-सं० ५२४५, दिसम्बर २०१९ ई० | संख्या १२

पूर्ण संख्या १११७

भगवान् श्रीकृष्णका अर्जुनको प्रबोधन

अपना धर्म देखकर भी तू इस अधीरताको मत धार।
धर्मयुद्ध सम और नहीं कुछ क्षत्रियका है जगमें सार॥
स्वयं-प्राप्त यह खुला हुआ है युद्ध-सुरूप स्वर्गका द्वार।
भाग्यवान क्षत्रिय ही इसको पाते हैं, हे पाण्डुकुमार!॥
मर जानेसे स्वर्ग मिलेगा, जय होनेसे भूतल-राज।
इससे निश्चय ही भारत! तू हो जा खड़ा युद्धको आज॥
विजय-पराजय, हानि-लाभ, सुख-दुःख सभीको जान समान।
फिर प्रवृत्त हो जा तू रणमें, पाप नहीं होगा मतिमान॥

[पद-रत्नाकर]

(संस्करण २,००,०००)

कल्याण, सौर पौष, वि० सं० २०७६, श्रीकृष्ण-सं० ५२४५, दिसम्बर २०१९ ई०

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१- भगवान् श्रीकृष्णका अर्जुनको प्रबोधन	३
२- कल्याण	५
३- सर्वोच्च न्यायालयका स्वागतयोग्य ऐतिहासिक निर्णय (राधेश्याम खेमका)	६
४- जरासन्धकी कैदसे राजाओंकी मुक्ति [आवरणचित्र-परिचय]	८
५- गीतोक्त अनन्य शरणागति (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	९
६- साधन कैसे करें? (ब्रह्मलीन स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	१०
७- सिद्धान्तको लेकर मत लड़ो (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	११
८- नाम-साधना (श्रीब्रह्मचैतन्यजी महाराज गोंदवलेकर) [संग्राहक—श्रीगो०सी० गोखले]	१२
९- प्राप्त परिस्थितिका सदुपयोग करो [साधकोंके प्रति—] (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)	१४
१०- 'हरि' कीर्तनकी महिमा	१५
११- गोस्वामी तुलसीदासजीकी युगलोपासना (डॉ० श्रीरमेशमंगलजी वाजपेयी)	१६
१२- जीव-शिक्षा सिद्धान्त [स्वामी श्रीहरिदासकृत अष्टादश पद]	१९
१३- संत-स्मरण (परम पूज्य देवाचार्य श्रीराजेन्द्रदासजी महाराजके गीताभवन, ऋषिकेशमें हुए प्रवचनसे साभार)	२१
१४- मैं और मेरा जीवन (ब्रह्मचारी श्रीत्र्यम्बकेश्वरचैतन्यजी महाराज, अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ)	२२
१५- जब सारे सहारे जवाब दे देते हैं.... (श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट)	२५
१६- संत-वचनामृत (वृन्दावनके गोलोकवासी सन्त पूज्य श्रीगणेशदासजी भक्तमालीके उपदेशपरक पत्रोंसे)	२९
१७- महाभारत-कथाका व्यापक विस्तार (सुश्री डॉ० मोनाबालाजी)	३०
१८- गोग्रास-दानका अनन्त फल	३३
१९- भगवती श्रीवाराही देवी (श्रीपरिपूर्णानन्दजी वर्मा)	३४
२०- एक सन्त जिनकी कृपासे डाकू भक्त बन गया [भक्त-गाथा] (डॉ० श्रीमती ज्ञानवती अवस्थी)	३६
२१- साधनोपयोगी पत्र	३८
२२- व्रतोत्सव-पर्व [माघमासके व्रतपर्व]	४०
२३- व्रतोत्सव-पर्व [फाल्गुनमासके व्रतपर्व]	४१
२४- कृपानुभूति	४२
२५- पढ़ो, समझो और करो	४३
२६- मनन करने योग्य	४६
२७- निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक विषय-सूची	४७

चित्र-सूची

१- जरासन्धकी कैदसे राजाओंकी मुक्ति	(रंगीन)	आवरण-पृष्ठ
२- भगवान् श्रीकृष्णका अर्जुनको प्रबोधन	(,,)	मुख-पृष्ठ
३- जन्मभूमि अयोध्यापुरीमें बालक श्रीरामका बिहार	(इकरंगा)	६
४- जरासन्धकी कैदसे राजाओंकी मुक्ति	(,,)	८
५- मायासे शिशुरूपधारी जनार्दनद्वारा अग्निकी दाहिकाशक्तिका हरण तथा उसका दर्प भंग करना	(,,)	४६

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय॥
जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥
जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

एकवर्षीय शुल्क ₹ २५०

पंचवर्षीय शुल्क ₹ १२५०

विदेशमें Air Mail शुल्क — **वार्षिक** US$ 50 (₹ 3,000), **पंचवर्षीय** US$ 250 (₹ 15,000) — Us Cheque Collection Charges 6$ Extra

संस्थापक—**ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका**
आदिसम्पादक—**नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार**
सम्पादक—**राधेश्याम खेमका,** सहसम्पादक—**डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़**
केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : **gitapress.org** | e-mail : **kalyan@gitapress.org** | ✆ **09235400242 / 244**

सदस्यता-शुल्क—**व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें।**
Online सदस्यता हेतु gitapress.org पर **Kalyan** या **Kalyan Subscription** option पर click करें।
अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क gitapress.org अथवा **book.gitapress.org** पर नि:शुल्क पढ़ें।

कल्याण

याद रखो—मनुष्यके जैसे विचार होते हैं, यथार्थमें वैसा ही उसका स्वरूप होता है। बाहरसे कोई मनुष्य कितनी ही ऊँची ज्ञानकी, भक्तिकी या वैराग्यकी बातें क्यों न करें, जबतक उसके भीतरी विचार वैसे नहीं हैं, तबतक उसमें न वस्तुत: ज्ञान है, न भक्ति है और न वैराग्य ही है।

याद रखो—विचारोंका परिवर्तन केवल कथन-मात्रसे नहीं हो जाता। उसके लिये दीर्घकालतक निरन्तर श्रद्धापूर्वक अभ्यास करनेकी आवश्यकता होती है। तुम्हारे अंदर जो-जो बुरे विचार हों, उन-उनके विरोधी अच्छे विचारोंका बार-बार मनन करो। विषयोंकी आसक्ति दूर करनेके लिये उनमें दु:ख-दोषादि देखकर वैराग्यका अभ्यास करो; स्त्री या पुरुषके रूप-सौन्दर्यके मोहका तथा कामवासनाका नाश करनेके लिये शरीरके अंदर भरे हुए गंदे पदार्थ—रक्त, मांस, मेद, मज्जा, हड्डी, विष्ठा, मूत्र और कफ आदिका विचार करो, सड़े मुर्देका चित्र मनके सामने रखो; दूसरेके दोषोंका चिन्तन दूर करनेके लिये दूसरोंके गुणोंको खोज-खोजकर देखो और अपने दोषोंपर दृष्टिपात करो; क्रोधका नाश करनेके लिये क्षमाका उपयोग करो, लोभको हटानेके लिये लोभी मनुष्योंको विपत्तिमें फँसकर परिणाममें जो भयानक दु:ख भोगने पड़ते हैं, उनपर विचार करो, शोक-विषादके नाशके लिये भगवान्‌के मंगलमय विधानपर विश्वास करो और पापवासनाओंके नाशके लिये नरकोंकी भीषण यन्त्रणाओंका स्मरण करो।

याद रखो—मनके प्रधान पाँच दोष हैं—विषाद, क्रूरता, व्यर्थचिन्तन, निरंकुशता और गन्दे विचार। विरोधी विशुद्ध विचारोंके द्वारा इनका नाश करो। प्रसन्नता, सौम्यत्व, मानसिक मौन, मनोनिग्रह और शुद्ध भावोंका परिशीलन इनके विरोधी विचार हैं। भगवान्‌के मंगलमय विधानसे जो कुछ फलरूपमें प्राप्त होता है, सब मंगलमय ही है चाहे देखनेमें भयानक ही हो; ऐसा विश्वास हो जानेपर प्रत्येक स्थितिमें प्रसन्नता रहेगी। तुम्हारे साथ कोई क्रूरताका बर्ताव करे, तो तुम्हें कितना बुरा लगता है और शान्त-सौम्य व्यवहारसे कितना सुख होता है, इसी प्रकार तुम्हारी क्रूरता लोगोंको बुरी लगती है और तुम्हारी सौम्यतासे उनको सुख होता है; इस प्रकारके विचारसे सौम्यता आवेगी। दिन-रात संसारके अनुकूल-प्रतिकूल विषयोंका चिन्तन करते रहनेसे चित्तमें कभी शान्ति नहीं होती, अतएव इसके बदलेमें प्रभुके मंगलमय नाम, गुण, लीला, तत्त्व, रहस्य आदिका चिन्तन-मनन सदा-सर्वदा करते रहनेसे विषयोंके लिये मन मौन हो जायगा। जबतक मन वशमें नहीं है, तबतक वह जहाँ-तहाँ भटकता और अशुद्ध संकल्प-विकल्पोंमें पड़कर नये-नये दु:खोंकी सृष्टि करता रहता है; मन वास्तवमें तुम्हारा (आत्माका) सेवक है, स्वामी नहीं; इस बातको अच्छी तरह समझकर मनको वशमें कर लोगे तो वह तुम्हारे नियन्त्रणमें आकर प्रत्येक शुभ प्रयत्नमें तुम्हारा सहायक बन जायगा। और मनमें जो काम, क्रोध, लोभ, मद, मोह, हिंसा, असत्य, स्तेय और मान आदिके अशुभ भाव भरे हैं, इनके कारण इनके अनुकूल ऐसी ही कि क्रिया बनती है और जीवन अशुभका मूर्तिमान् रूप बन जाता है, इन दुर्भावोंकी जगह ब्रह्मचर्य, क्षमा, सन्तोष, विवेक, विनय, अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अमानिता आदिके स्वरूप, गुण और लाभोंका चिन्तन किया जाय तो चित्त शुद्ध भावोंसे भर जायगा। इस प्रकार जब चित्तमें ये पाँचों बातें भली-भाँति आ जायँगी, तब तुम्हारा मानस-तप सिद्ध हो जायगा। फिर तुम्हारा बाहरी व्यवहार भी वैसा ही विशुद्ध हो जायगा।

याद रखो—विचारोंके नियन्त्रणके लिये सबसे बढ़कर उपयोगी साधन है—आत्मशक्तिपर या सर्वशक्तिमान् परम सुहृद् भगवान्‌की कृपापर दृढ़ विश्वास। यह विश्वास जितना ही बढ़ेगा, उतना ही शीघ्र और सरलतासे मनुष्य अपने मनोगत अशुभ विचारोंके नाश और शुभ विचारोंके विस्तारमें समर्थ होगा। आत्मा और भगवान्‌पर विश्वास करनेवाले पुरुषके मनसे देहाभिमान, स्थूल अहंकार, भौतिक बलका आश्रय आदि दूषित और गिरानेवाले भाव नष्ट हो जाते हैं। **'शिव'**

सर्वोच्च न्यायालयका स्वागतयोग्य ऐतिहासिक निर्णय

[श्रीरामजन्मभूमिके सदियों पुराने विवादका सुखान्त]

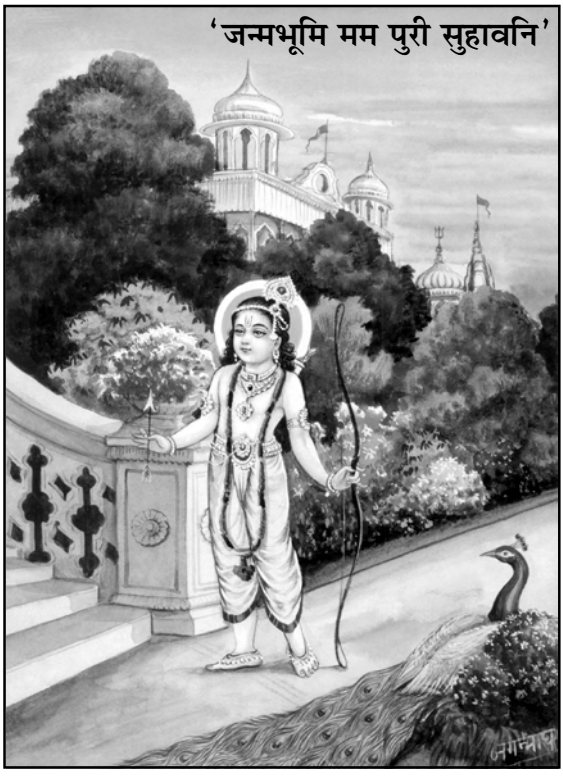

परम हर्षका विषय है कि करोड़ों हिन्दुओंकी आस्थाकी प्रतीक अयोध्यास्थित श्रीरामजन्मभूमिसे सम्बन्धित सदियों पुराना विवाद भारतके सर्वोच्च न्यायालयद्वारा ९ नवम्बर २०१९ को दिये ऐतिहासिक निर्णयके साथ समाप्त हो गया। वस्तुतः यह उस सत्यकी विजय है, जिसे पहले विधर्मियोंने ध्वस्त करनेका कुत्सित प्रयास किया। तदनन्तर दासताके अन्धकारयुगीन काल-खण्डमें इसे पुनः मण्डित न किया जा सका। यह उस सत्यकी विजय है, जिसे कुछ संगठित शक्तियोंने अपने निहित स्वार्थोंके लिये जटिल बनाकर हल नहीं होने दिया, पर सत्यकी सदैव विजय होती है, असत्यकी नहीं—'सत्यमेव जयति नानृतम्' (मुण्डकोपनिषद् ३।१।६) **सत्य तो स्वयं प्रकाशित है, उसे षड्यन्त्रपूर्वक कबतक झुठलाया जा सकता है।**

इस निर्णयके साथ अब यह तथ्य सर्वमान्य हो गया है कि भगवान् मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामका जन्म उसी स्थानपर हुआ था, जहाँ श्रीरामललाका विग्रह विराजमान है। सर्वोच्च न्यायालयने अपने निर्णयमें वाल्मीकीय रामायण एवं स्कन्दपुराणोक्त इन आर्ष प्रमाणोंको भी उद्धृत किया है—

ततो यज्ञे समाप्ते तु ऋतूनां षट् समत्ययुः। ततश्च द्वादशे मासे चैत्रे नावमिके तिथौ॥
नक्षत्रेऽदितिदैवत्ये स्वोच्चसंस्थेषु पञ्चसु। ग्रहेषु कर्कटे लग्ने वाक्पताविन्दुना सह॥
प्रोद्यमाने जगन्नाथं सर्वलोकनमस्कृतम्। कौसल्याजनयद् रामं दिव्यलक्षणसंयुतम्॥

(वाल्मीकीय रामायण, बालकाण्ड १८।८-१०)

यज्ञ-समाप्तिके पश्चात् जब छः ऋतुएँ बीत गयीं, तब बारहवें मासमें चैत्रके शुक्लपक्षकी नवमी तिथिको पुनर्वसु नक्षत्र एवं कर्क लग्नमें कौसल्यादेवीने दिव्य लक्षणोंसे युक्त, सर्वलोकवन्दित जगदीश्वर श्रीरामको जन्म दिया। उस समय (सूर्य, मंगल, शनि, गुरु और शुक्र—ये) पाँच ग्रह अपने-अपने उच्च स्थानमें विद्यमान थे तथा लग्नमें चन्द्रमाके साथ बृहस्पति विराजमान थे।

तस्मात् स्थानत ऐशाने रामजन्म प्रवर्तते। जन्मस्थानमिदं प्रोक्तं मोक्षादिफलसाधनम्॥
विघ्नेश्वरात् पूर्वभागे वासिष्ठादुत्तरे तथा। लौमशात् पश्चिमे भागे जन्मस्थानं ततः स्मृतम्॥

(स्कन्दपुराण, अयोध्यामाहात्म्य १०।१८-१९)

.....उस स्थानसे ईशानकोण में श्रीरामका अवतरण हुआ था, अतः इसे 'जन्म-स्थान' कहते हैं। यह मोक्षादि फलोंकी सिद्धि करनेवाला है। विघ्नेश तीर्थसे पूर्व, वसिष्ठतीर्थसे उत्तर तथा लोमशतीर्थसे पश्चिम भागमें 'जन्म-स्थान' माना गया है।

जिनसे प्रमाणित होता है कि जन्मभूमि यहीं थी, यहीं है और यहीं रहेगी। विशेष बात यह रही कि सर्वोच्च न्यायालयकी पाँच सदस्यीय पीठने सर्वसम्मतिसे निर्णय दिया अर्थात् सभी न्यायाधीश निर्णयके विषयमें निर्भ्रान्त एवं एकमत रहे। सर्वोच्च न्यायालयकी इसलिये विशेष प्रशंसा की जानी चाहिये कि उन्होंने ४० दिनोंतक लगातार मैराथन सुनवाई करके एक निर्धारित समय-सीमामें निष्पक्ष निर्णय देनेका बीड़ा उठाया अन्यथा तो पूर्वकी भाँति पता नहीं आगे कबतक विरोधी पक्ष 'दो कदम आगे—दो कदम पीछे' की शैलीमें केवल अड़चनें डालकर निर्णय ही न होने देते। पूर्वकी भाँति ऐसे प्रयास इस बार भी हुए, पर वे सफल न हुए।

सनातन आर्षग्रन्थों, ऐतिहासिक दस्तावेजों, मध्यकालीन तीर्थयात्रा वृत्तान्तों तथा पुरातात्त्विक अवशेषोंके सबल साक्ष्योंके प्रकाशमें सत्यको तो प्रकाशित होना ही था और वह हुआ भी। इन साक्ष्योंमें भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग (ASI—Archeological Survey of India) द्वारा उत्खननमें प्राप्त अवशेषोंकी विशेष भूमिका रही। उल्लेखनीय है कि यह उत्खनन उसी स्थानपर हुआ, जहाँ ६ दिसम्बर १९९२ ई० से पहले विवादास्पद ढाँचा विद्यमान था। इस उत्खननमें कसौटी पत्थरके बने श्यामवर्ण नक्काशीदार खम्भोंसहित एक प्राचीन हिन्दू मन्दिरकी संरचना प्राप्त हुई। साथ ही अनेक हिन्दू देवी-देवताओंकी मूर्तियाँ और प्रतीकोंकी आकृतियाँ भी प्राप्त हुईं, जिन्हें पुरातत्त्वविदोंने स्पष्टरूपसे १२वीं शताब्दीसे पूर्वका माना। अर्थात् जहाँ विवादास्पद ढाँचा स्थित था, वह स्पष्टतः एक भव्य मन्दिरको ध्वंस करके ही बनाया गया था—यह प्रमाणित हो गया।

यह भी अत्यन्त सन्तोषकी बात है कि केन्द्र एवं राज्य सरकारोंने समाजमें चतुर्दिक् शान्ति एवं सौहार्द बनाये रखनेके लिये लोक-प्रशासन (Public Administration) की कलाका बहुत कुशलतापूर्वक सफल प्रयोग किया। साथ ही वादी-प्रतिवादी गणोंसहित सभी राजनीतिक दलों एवं संस्थाओंने वाणी एवं व्यवहार दोनोंमें अभूतपूर्व संयम दिखाया, जिससे देशभरमें कोई अप्रिय घटना नहीं घटी।

सर्वोच्च न्यायालयने अपने १०४५ पृष्ठोंके निर्णयमें सरकारको यह भी निर्देश दिया है कि वह तीन माहमें एक ट्रस्ट बनाकर उसके माध्यमसे वहाँ मन्दिर-निर्माणकी प्रक्रियाको आगे बढ़ाये। आशा है सरकार अपने दृढ़संकल्पका परिचय देते हुए उस प्रक्रियाको शीघ्रातिशीघ्र पूर्ण करेगी, जिससे पुण्यमयी जन्मभूमिपर मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराघवेन्द्र-सरकारका भव्य मन्दिर बननेका मार्ग प्रशस्त हो सके। हमें उस क्षणकी प्रतीक्षा है, जब उस नवनिर्मित पावन धाममें विराजित रामललाके दर्शनोंका सौभाग्य हम सभीको प्राप्त होगा। 'जय श्रीराम!'

—राधेश्याम खेमका

आवरणचित्र-परिचय—

जरासन्धकी कैदसे राजाओंकी मुक्ति

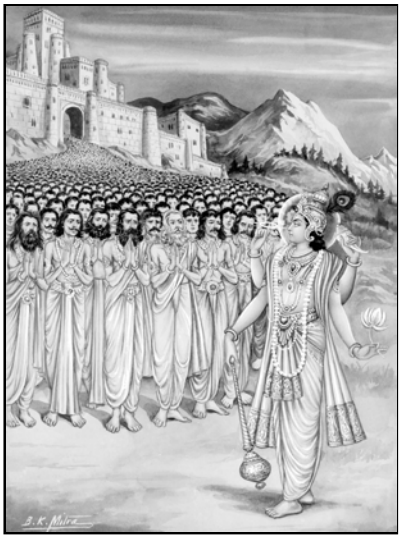

मगधका राजा जरासन्ध साठ हजार हाथियोंका बल रखता था। उसने बलि चढ़ानेके लिये बहुत-से राजाओंको पकड़कर कारागारमें डाल दिया था। राजाओंने श्रीकृष्णसे अपने उद्धारकी प्रार्थना करनेके लिये एक दूत द्वारका भेजा। इधर देवर्षि नारदजीके द्वारा धर्मराज युधिष्ठिरके राजसूययज्ञका समाचार श्रीकृष्णको मिला। उद्धवजीकी सलाह मानकर श्रीकृष्ण यादवोंके साथ इन्द्रप्रस्थ आये। श्रीकृष्णकी आज्ञा पाकर युधिष्ठिरजीने अपने चारों भाइयोंको दिग्विजयके लिये भेजा। वे लोग दिग्विजय करके लौट आये, किंतु जरासन्ध नहीं जीता गया था। श्रीकृष्ण अर्जुन और भीमसेनके साथ ब्राह्मणों-जैसा वेश बनाकर मगध पहुँचे। उन्होंने जरासन्धसे द्वन्द्वयुद्धकी याचना की। जरासन्धने भीमसेनसे गदायुद्ध करना स्वीकार कर लिया। सत्ताईस दिनोंतक लगातार गदायुद्ध होता रहा। अट्ठाईसवें दिन श्रीकृष्णने युद्धके समय एक तिनका भीमको चीरकर दिखाया। वे श्रीकृष्णका संकेत समझ गये। उन्होंने जरासन्धको पटककर उसके एक पैरपर पैर रखकर दूसरा पैर पकड़कर उसको बीचसे चीर डाला। जरासन्धके मरनेपर उसकी कैदमें पड़े सब राजाओंको श्रीकृष्णने मुक्त किया। कैदसे छूटे हुए राजाओंने श्रीकृष्णकी विधिपूर्वक पूजा की और स्तवन करने लगे—

कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने।
प्रणतक्लेशनाशाय गोविन्दाय नमो नमः॥

इस प्रकार स्तवन करनेके बाद उन राजाओंने कहा—'हे सर्वशक्तिमान् प्रभो! हम जरासन्धरूपी दुःखके दल-दलमें फँसे हुए थे। कृपापूर्वक आपने हमारा उद्धार किया। सर्वव्यापक यदुनन्दन! हम दुःखसे मुक्त हुए। आपने उज्ज्वल कीर्तिकी स्थापना की। हम आपके सामने नम्रतासे झुककर खड़े हैं। आप हमें कुछ आज्ञा दीजिये, हम आपके आदेशका पालनकर कृतकृत्य हो जायँगे। भगवान् श्रीकृष्णने उन्हें आश्वासन देते हुए कहा—'धर्मराज युधिष्ठिर चक्रवर्तिपद प्राप्त करनेके लिये राजसूय यज्ञ करना चाहते हैं। आपलोग उनकी सहायता कीजिये।' राजाओंकी प्रसन्नताकी सीमा न रही। उन्होंने हृदयसे यह प्रस्ताव स्वीकार किया। अब वे लोग भगवान् श्रीकृष्णको रत्नराशिकी भेंट देने लगे। भगवान्‌ने उनपर कृपा करके बड़ी कठिनाईसे वह भेंट स्वीकार की। जरासन्धका पुत्र सहदेव मन्त्रियोंके साथ पुरोहितको आगेकर प्रचुर रत्नराशि लिये बड़ी नम्रतासे श्रीकृष्णके सामने उपस्थित हुआ। भगवान् श्रीकृष्णने भयभीत सहदेवको अभयदान देकर उसकी भी भेंट स्वीकार की। श्रीकृष्ण, अर्जुन और भीमसेनने वहीं सहदेवका राजपदपर अभिषेक किया। सहदेव बड़ी प्रसन्नतासे अपनी राजधानीमें लौट गया।

भगवान् श्रीकृष्ण भीम, अर्जुन और उन सब राजाओंके साथ धन-रत्नादिसे लदे रथपर शोभायमान हो इन्द्रप्रस्थ पहुँचे। उन्हें देखकर धर्मराजके आनन्दकी सीमा न रही। भगवान्‌ने कहा—'राजेन्द्र! यह बड़े सौभाग्यकी बात है कि वीरवर भीमसेनने जरासन्धको मारने और कैदी राजाओंको कैदसे छुड़ानेका सुयश प्राप्त किया है। इससे बढ़कर और क्या आनन्द होगा कि भीमसेन और अर्जुन कार्य-सिद्ध करके सकुशल निर्विघ्न लौट आये।' धर्मराज युधिष्ठिरने बड़ी प्रसन्नतासे भगवान् श्रीकृष्णका सत्कार किया और अपने भाइयोंको प्रेमसे गले लगाया। जरासन्धकी मृत्युसे सभी पाण्डव आनन्दित हुए। धर्मराजने सब बन्धनमुक्त राजाओंसे मिल-भेंटकर उनका यथोचित आदर-सत्कार किया और समयपर उन्हें विदा किया। [**महाभारत, सभापर्व**]

गीतोक्त अनन्य शरणागति

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्॥
सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥

(गीता १८।६२, ६६)

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—'हे भारत! सब प्रकारसे उस परमेश्वरकी ही अनन्य शरणको प्राप्त हो, उस परमात्माकी कृपासे ही तू परम शान्ति और सनातन परमधामको प्राप्त होगा। (वह परमात्मा मैं ही हूँ, अतएव) सर्व धर्मोंको अर्थात् सम्पूर्ण कर्मोंके आश्रयको त्यागकर तू केवल एक मुझ सच्चिदानन्दघन वासुदेव परमात्माकी ही अनन्य शरणको प्राप्त हो, मैं तुझे समस्त पापोंसे मुक्त कर दूँगा, तू शोक मत कर!'

भगवान्‌की उपर्युक्त आज्ञाके अनुसार हम सबको उनके शरण हो जाना चाहिये। लज्जा-भय, मान-बड़ाई और आसक्तिको त्यागकर शरीर और संसारमें अहंता-ममतासे रहित होकर केवल एक परमात्माको ही परम आश्रय, परम गति और सर्वस्व समझना तथा अनन्य भावसे अतिशय श्रद्धा, भक्ति एवं प्रेमपूर्वक निरन्तर भगवान्‌के नाम, गुण, प्रभाव और स्वरूपका चिन्तन करते रहना एवं भगवान्‌का भजन-स्मरण करते हुए ही भगवदाज्ञानुसार कर्तव्य-कर्मोंका निःस्वार्थ-भावसे केवल परमेश्वरके लिये ही आचरण करना तथा सुख-दुःखोंकी प्राप्तिको भगवान्‌का भेजा हुआ पुरस्कार समझकर उनमें समचित्त रहना—संक्षेपमें इसीका नाम अनन्य-शरण है।

चित्तसे भगवान् सच्चिदानन्दघनके स्वरूपका चिन्तन, बुद्धिसे 'सब कुछ एक नारायण ही है' ऐसा निश्चय, प्राणोंसे (श्वासद्वारा) भगवन्नाम-जप, कानोंसे भगवान्‌के गुण, प्रभाव और स्वरूपकी महिमाका भक्तिपूर्वक श्रवण, नेत्रोंसे भगवान्‌की मूर्ति और भगवद्भक्तोंके दर्शन, वाणीसे भगवान्‌के गुण, प्रभाव और पवित्र नामका कीर्तन एवं शरीरसे भगवान् और उनके भक्तोंकी निष्काम सेवा—ये सभी कर्म शरणागतिके अन्दर आ जाते हैं। इस प्रकार भगवत्सेवापरायण होनेसे भगवान्‌में प्रेम होता है।

संसारमें जिन वस्तुओंको मनुष्य 'मेरी' कहता है, वे सब भगवान्‌की हैं। मनुष्य मूर्खतासे उनपर अधिकारका आरोपणकर सुखी-दुःखी होता है। भगवान्‌की सब वस्तुएँ भगवान्‌के ही काममें लगनी चाहिये। भगवान्‌के कार्यके लिये यदि संसारकी सारी वस्तुएँ मिट्टीमें मिल जायँ तो भी बड़े आनन्दकी बात है और उनके कार्यके लिये बनी रहें तो भी बड़े हर्षका विषय है। उन वस्तुओंको न तो अपनी सम्पत्ति समझना चाहिये और न उन्हें अपने भोगकी सामग्री ही मानना चाहिये; क्योंकि वास्तवमें तो सब कुछ नारायणका ही है, इसलिये नारायणकी सर्व वस्तु नारायणके अर्पण की जाती है। यों समझकर संसारमें जो कार्य किये जाते हैं, वही भगवत्-प्रेमरूप शरणकी प्राप्तिका साधन है।

उपर्युक्त प्रकारसे जो कुछ भी कर्म किया जाय, सब भगवान्‌के लिये करना चाहिये। इसीका नाम अर्पण है। जो कुछ भी हो रहा है, सब भगवान्‌की इच्छासे हो रहा है, लीलामयकी इच्छासे लीला हो रही है। इसमें व्यर्थके बुद्धिवादका बखेड़ा नहीं खड़ा करना चाहिये। अपनी सारी इच्छाएँ भगवान्‌की इच्छामें मिलाकर अपना जीवन सर्वतोभावसे भगवान्‌को सौंप देना चाहिये। जब इस प्रकार जीवन समर्पण होकर प्रत्येक कर्म केवल भगवदर्थ ही होने लगेगा, तभी हमें भगवत्प्रेमकी कुछ प्राप्ति हुई है—हम भगवान्‌के शरण होने चले हैं, ऐसा समझा जायगा।

सच्चिदानन्दघन परमात्माकी पूर्ण शरण हो जानेपर एक सच्चिदानन्दघनके सिवा और कुछ भी नहीं रह जाता। वह अपार, अचिन्त्य, पूर्ण, सर्वव्यापक एक परमात्मा ही अचल-अनन्त-आनन्दरूपसे सर्वत्र परिपूर्ण है। उस आनन्दको कभी नहीं भुलाना चाहिये। आनन्दघनके साथ मिलकर आनन्दघन ही बन जाना चाहिये। जो कुछ भासता है, जिसमें भासता है और जिसको भासता है, वह सब एक आनन्दघन परमात्मा ही परिपूर्ण है। इस पूर्ण आनन्दघनका ज्ञान भी उस आनन्दघनको ही है। वास्तवमें यही अनन्य शरणागति है!

साधन कैसे करें ?

(ब्रह्मलीन स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)

जो लोग कहते हैं कि साधनमें मन नहीं लगता, उनको समझना चाहिये कि हमने अपनी रुचि, विश्वास और योग्यताके अनुरूप साधनका निर्माण नहीं किया है। साधनका निर्माण हो जानेके बाद उसमें मन न लगे या उससे लक्ष्यकी प्राप्ति न हो, यह कभी नहीं हो सकता।

अत: साधकको चाहिये कि मैं साधन नहीं कर सकता या साधनमें सफलता मिलना कठिन है, इस मान्यताको अपने जीवनसे निकाल दे एवं यह निश्चय करे कि अब जैसी परिस्थिति प्राप्त है, उसीमें मैं साधन कर सकता हूँ और उससे मुझे अवश्य सफलता मिलेगी। साधन नहीं हो सकता, इस बातको सर्वथा झूठी समझे। दूसरोंकी बराबरी न करे। विवेकके प्रकाशमें रुचि, विश्वास और योग्यताके अनुसार साधनका निर्माण करके साधनमें तत्पर हो जाय।

जो साधन रुचिकर होता है, जिसमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं होता, जिसमें यह विकल्परहित विश्वास होता है कि इससे मेरे समस्त अभाव मिटकर मुझे अपने साध्यकी प्राप्ति हो जायगी, वह साधन साधकका जीवन बन जाता है। उसमें नित्य नया उत्साह और प्रेम बढ़ता रहता है।

साधकको चाहिये कि बलका, सुखका, निर्बलताका, दु:खका सदुपयोग करे अर्थात् जिस समय जो कुछ प्राप्त है, उसीका सदुपयोग करे। बीती हुई बातोंका चिन्तन और भविष्यकी आशा न करे। यदि निर्बलताका अनुभव हो तो संसारसे सर्वथा निराश होकर परमेश्वरपर विश्वासपूर्वक निर्भर हो जाय।

शेखचिल्लीकी भाँति मनोराज्य करनेसे कोई काम नहीं होता, प्रत्युत मनुष्य संकल्पोंके जालमें फँस जाता है। अत: मनुष्यको चाहिये कि जो काम कर सके, उसे ही पूरा कर दे। जो न कर सके, उसे करनेका संकल्प छोड़ दे। सभी परिस्थितियाँ कभी किसी भी मनुष्यके अनुकूल नहीं हो सकतीं। वह जिसको अपना प्यारा मानता है, वही उसके मनकी बात पूरी नहीं होने देता, उसके प्रतिकूल करने लग जाता है। राजा दशरथ सबसे अधिक कैकेयीसे प्यार करते थे, वही उनके मनकी बात पूरी होनेमें बाधक हो गयी।

अत: साधकको चाहिये कि दूसरोंके मनकी धर्मानुकूल बातको भगवान्‌के नाते पूरी करे। अपने मनको बदल दे या उसका नाश कर दे। ऐसा करनेमें हरेक परिस्थितिमें रास्ता मिल जायगा, कोई कठिनाई नहीं रहेगी। अत: साधकको अपने मनकी बात पूरी करनेमें शक्ति नहीं लगानी चाहिये।

जो कुछ होता है वह उस सर्वान्तर्यामी, सबके सुहृद् प्रभुकी सत्तासे होता है। अत: जब अपने मनकी इच्छा के विपरीत हो, तब साधकको समझना चाहिये कि अब प्रभु अपने मनकी बात पूरी कर रहे हैं। अत: वे शीघ्र ही मुझे अपनानेवाले हैं, अपना प्रेम प्रदान करनेवाले हैं। प्रत्येक परिस्थिति प्रभुका आदेश और सन्देश है। उसका सदुपयोग करनेमें और प्रभुके मनमें अपना मन मिला देनेमें ही अपना सब प्रकारसे हित भरा हुआ है। यह सोचकर साधकको कभी भी अनुकूलताकी आशा नहीं करनी चाहिये और प्रतिकूलतासे भय नहीं करना चाहिये। सदैव अपने प्रभुपर ही निर्भर रहना चाहिये।

मानव-जीवन साधनके लिये ही मिला है। साधन करनेमें मनुष्य सदैव स्वाधीन है। ठीक साधन करनेसे सफलता अवश्य होती है। अत: साधकके जीवनमें भगवान्‌पर अविचल विश्वास होना चाहिये एवं साधनमें नित्य नव-प्रेम और उत्साह बढ़ते रहना चाहिये। हर समय प्रभुकी कृपाका दर्शन करते हुए उनके प्रेममें विभोर रहना चाहिये।

सिद्धान्तको लेकर मत लड़ो

(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)

अभिमानवश यह मत कहो कि भगवान् ऐसे ही हैं और शास्त्रका तत्त्व यही है। भगवान्‌का यथार्थ ज्ञान पुस्तकें पढ़नेसे, तर्कयुक्तियोंकी प्रबलतासे या केवल दर्शनोंकी मीमांसासे नहीं हो सकता। इनसे बुद्धिकी प्रखरता तो बढ़ती है, परंतु आगे चलकर वही बुद्धि ऐसे तर्कजालमें फँसा देती है कि फिर बाध्य होकर अभिमान और राग-द्वेषादिके प्रभावमें आ जाना पड़ता है और जीवन ही जंजाल बन जाता है।

× × ×

भगवान्‌ने सारी गीता कह-सुनानेके बाद अठारहवें अध्यायके अन्तिम भागमें अपने यथार्थ ज्ञानकी प्राप्तिके उपाय बतलाये हैं। गीता तो सुना ही दी थी, फिर आवश्यकता क्या थी उपाय बतलानेकी? उपाय बतलानेका यही तात्पर्य है कि केवल पढ़नेसे काम नहीं होता, पढ़-सुनकर वैसा करना पड़ेगा, तब भगवान्‌की पराभक्ति मिलेगी और पराभक्ति मिलनेपर भगवत्कृपासे भगवान्‌का यथार्थ ज्ञान होगा। वे उपाय ये हैं—

सारी पाप-तापकी, छल-छिद्रकी, दम्भ-दर्पकी और ऐसे ही अन्यान्य दोषोंकी भावनाको मिटाकर बुद्धिको परम शुद्ध करो; एकान्तमें रहकर वृत्तियोंको संयत करो; परिमित और शुद्ध आहार करके शरीरका शोधन करो; मन, वाणी और शरीरपर अपना अधिकार स्थापित करो; दृढ़ वैराग्य धारण करो; नित्य भगवान्‌का ध्यान करो; विशुद्ध धारणासे अन्तःकरणका नियमन करो; शब्दादि सब विषयोंका त्याग करो; राग-द्वेषकी जड़ काटो; अहंकार, बल, दर्प, काम, क्रोध और परिग्रहका त्याग करो। सब जगहसे ममताको हटा लो और ऐसा करके चित्तको सर्वथा शान्त कर लो, तब ब्रह्मकी प्राप्तिके योग्य होओगे। इसके बाद ब्रह्मीभूत अवस्था, अखण्ड प्रसन्नता, शोक और आकांक्षासे रहित सम स्थिति और सब भूतोंमें सम—एकात्मभावके प्राप्त होनेपर, तब भगवान्‌के तत्त्वका—अर्थात् भगवान् कैसे हैं, क्या हैं—यह ज्ञान होगा और तब ऐसा यथार्थ ज्ञान होते ही तुम भगवान्‌में प्रवेश कर जाओगे।

सोचो, जिनको भगवान्‌का ऐसा ज्ञान हो गया, वे तो भगवान्‌में प्रवेश कर गये। जिनको ज्ञान नहीं हुआ, वे भगवान्‌को जानते नहीं। ऐसी अवस्थामें यह कहना कि 'मैं भगवान्‌का तत्त्व जानता हूँ'—अहंमन्यता है; विडम्बना है।

लड़ना छोड़ो—यह मत कहो कि भगवान् निर्गुण ही हैं, निराकार ही हैं, सगुण ही हैं, साकार ही हैं। वे सब कुछ हैं, उनकी वे ही जानें। हमें तो उन्हें मानकर चलना है; वे चाहे जो हों।

तुम पहले यह सोचो कि ऊपर बतलाये हुए उपायोंमेंसे तुमने कौन-कौन-सा उपाय पूरा साध लिया है। जब रास्तेमें ही नहीं चले, तब लक्ष्यस्थानका रूप-रंग बतलाना कैसा? राह चलो, साधन करो। चलकर वहाँ पहुँच जाओ, फिर आप ही जान जाओगे, वहाँका रूप-रंग कैसा है।

× × ×

चलना तो शुरू ही नहीं किया और लड़ने लगे नक्शा देखकर। इससे बताओ तो क्या लाभ होगा? नक्शेमें ही रह जाओगे, असली स्वरूप तो सामने आयेगा ही नहीं। इसलिये विचार करो और अकड़ छोड़कर साधन करो; याद रखो—साधनकी पूर्णता होनेपर ही साध्यका स्वरूप सामने आता है।

भगवान्‌को जाननेके जो उपाय ऊपर बतलाये गये हैं, वे न हो सकें तो श्रद्धाके साथ भगवान्‌के शरणागत हो जाओ। कहोगे—'हम तो भगवान्‌को जानते ही नहीं, फिर किस भगवान्‌की शरण हो जायँ?' इसीलिये तो भगवान्‌ने अर्जुनसे पहले ही कह दिया है—तुम एकमात्र मेरी शरणमें आ जाओ। बस, भगवान्‌की इस बातको मानकर अर्जुनको उपदेश देनेवाले सौन्दर्य-माधुर्यके अनन्त समुद्र परमप्रिय परम गुरु परम ईश्वर पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्णकी शरण हो जाओ। उनके इन शब्दोंको स्मरण रखो—'मुझमें मन लगाओ, मेरे भक्त बन जाओ, मेरी पूजा करो, मुझे नमस्कार करो, मैं शपथ करके कहता हूँ कि

तुम मुझको ही प्राप्त होओगे—याद रखो, तुम मुझे बड़े प्यारे हो।'

× × ×

और क्या चाहिये? बस, यदुकुलभूषण नन्दनन्दन आनन्दकन्द भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रकी शरण हो जाओ, उनके कृपाकटाक्षमात्रसे अपने-आप ही तुम सारे साधनोंसे सम्पन्न हो जाओगे; तुम्हें पराभक्ति प्राप्त हो जायगी और तब तुम उन्हें यथार्थरूपमें जान सकोगे।

× × ×

गीतामें उन्होंने जो दिव्य वचन कहे हैं, उनके अनुसार अपनेको योग्य बनानेकी चेष्टा करते रहो; दैवी सम्पत्ति और भक्तोंके गुणोंका अर्जन करो और करो उन्हींकी कृपाके भरोसे। और मन, वाणी, शरीरसे बारम्बार अपनेको एकमात्र उन्हींके चरणोंमें समर्पण करते रहो। जिस क्षण तुम्हारे समर्पणका भाव यथार्थ समर्पणके स्वरूपमें परिणत हो जायगा, उसी क्षण वे तुम्हें अपनी शरणमें ले लेंगे—बस, उसी क्षण तुम निहाल हो जाओगे। शरणागत होना ही परा गति है—'**सा काष्ठा सा परा गतिः।**'

× × ×

इसलिये तर्कजालमें मत पड़ो, सिद्धान्तको लेकर मत लड़ो, साध्यतत्त्वकी मीमांसा करनेमें जीवन न लगाओ। जिनको पाण्डित्यका अभिमान है, उन्हें लड़ने दो, तुम बीचमें मत पड़ो। तुम तो बस श्रीकृष्णको ही साध्यतत्त्व मानकर उनका आश्रय ले लो। गीतामें भगवान्‌ने इसीको सर्वोत्तम उपाय बतलाया है। गीता पढ़कर तुमने यदि ऐसा कर लिया तो निश्चय समझो—गीताका परम और चरम तत्त्व तुम अवश्य ही जान जाओगे। नहीं तो झगड़ते रहो और नाक रगड़ते रहो, न तत्त्व ही प्रकाशित होगा और न दुःखोंसे ही छूटोगे। संसारचक्रके चक्केके नीचे पिसते रह जाओगे और यातना-यन्त्रणासे सदा संपीडित होते जाओगे। चेतो और चेतो; सोचो और बार-बार सोचो। सिद्धान्तकी लड़ाई न लड़कर व्यवहारकी विजय प्राप्त करो। व्यवहार-वर्जित सिद्धान्त निष्प्राण है, निष्प्रयोजन है।

नाम-साधना

(श्रीब्रह्मचैतन्यजी महाराज गोंदवलेकर)

आर्ततासे नाम-स्मरण

हम जब सुस्थितिमें होते हैं, तब नामस्मरण अधिक होता है। जब उसमें कुछ बाधा आ जाती है तो हमारा सारा ध्यान बाधाकी ओर ही जाता है। इसका कारण है कि हम नामस्मरण ऊपरी तौरपर करते हैं। श्रद्धासे नामस्मरण करना हमें कठिन लगता है। नामस्मरण करते समय 'परमात्माके सिवाय इस दुनियामें हमारा कोई नहीं है'—ऐसी श्रद्धा या दृढ़ निश्चय हमारे मनमें होना चाहिये। यदि ऐसी स्थिति होगी तो प्रकृतिमें कोई विघ्न आनेपर भी नामस्मरण अखण्ड रहेगा। जब द्रौपदीको यह भान हुआ कि सिवाय भगवान्‌के कोई त्राता नहीं है, तब उसने भगवान्‌को रक्षाके लिये आर्तभावसे पुकारा; तब भगवान् उसकी रक्षाके लिये शीघ्र दौड़कर आये। इस प्रकार हमारा नामस्मरण भी सच्ची लगनसे होना चाहिये। जैसे बालक हर हालतमें अपनी माँको ही पुकारता है, माँके सिवाय और किसीको वह जानता ही नहीं, वैसे ही हमारा भाव नामस्मरणके बारेमें होना चाहिये। हमारा सच्चा आधार कौन है, यह तो संकटके समयपर ही सही-सही ज्ञात होता है।

नामस्मरण करनेकी सीढ़ियाँ यों कही जा सकती हैं। पहली—सुस्थितिमें ऊपरी तौरपर किया हुआ नामस्मरण; दूसरी—सिवाय परमात्माके अपने जीवनमें कोई त्राता नहीं है—यह जानकर संकटके समयपर किया हुआ नामस्मरण और तीसरी—यही भान दृढ़ होकर भविष्यमें अखण्ड किया जानेवाला नामस्मरण। इन तीनोंमेंसे ऊपरी तौरपर या दिखावटी नामस्मरण करनेवाला कहता है, 'हमारे जीवनमें संकट नहीं आने चाहिये।' साधु-सन्त तो कहते हैं, 'हे भगवान्! हमारे जीवनमें संकट आने दो, क्योंकि तभी हमें आपका सच्चा स्मरण होगा।' हमें अपने अस्तित्वका भान जितनी दृढ़तासे होता है, उतना ही भान भगवान्‌के अस्तित्वके बारेमें होना चाहिये। 'भगवान् सर्वत्र हैं,' यह भावना हमारे मनमें कभी जरूर

जाग्रत् होती है, किंतु वह भावना दृढ़, स्थायी न होनेके कारण तदनुसार हमारा आचरण नहीं होता। यदि हमारी भगवान्‌के अस्तित्वकी भावना, वृत्ति दृढ़ हो गयी तो तदनुसार हमारा आचरण होगा। 'यदि भगवान् ही सभी बातोंका कर्ता-धर्ता है,' यह भावना दृढ़ होगी तो हम हर बात उसे नहीं कहते रहेंगे। 'भगवान्‌को सब कुछ समझता है' ऐसी भावना असलमें दृढ़ हो गयी तो हमारा आचरण भगवान्‌को पसन्द आनेके ढंगसे ही होगा। तड़के उठकर भगवान्‌की मूर्ति चक्षुके सामने लानी चाहिये तथा प्रार्थना करनी चाहिये और कहना चाहिये—'जहाँ और जब तेरा विस्मरण होता है वहाँ मुझे जाग्रत् करो, तेरे सिवाय मेरा न कोई आधार है, न कोई त्राता।' यों कहो और प्रणाम करो। आदमी किसी भी प्रकारका क्यों न हो, नामस्मरणसे उसे अवश्य सन्तोष होगा। जो भगवान्‌का हो जाता है, वह जीनेसे या जीवनसे कभी उकताता नहीं। विषयसुखका आनन्द शराब पीनेपर जो आनन्द होता है, वैसा ही होता है। नशा उतरनेपर शराबी अधिक दुखी होता है। 'मैं भगवान्‌का ही हूँ' इस भावनासे जो जीवन व्यतीत करेगा, वही जीवनका सच्चा आनन्द अनुभव कर पायेगा। जीवनमें सच्चा सुख भोग सकेगा।

नाम-स्मरण, शरणागति और भगवत्प्राप्ति

भगवत्प्राप्तिके लिये शरणागतिके सिवाय और कोई मार्ग नहीं है और शरणागतिके लिये नामस्मरण जैसा उत्तम उपाय नहीं है। शरणागतिका मतलब है, 'मैं कर्ता हूँ' इस भावनाका, अभिमानका नष्ट हो जाना और 'सारी बातोंका कर्ता-धर्ता परमेश्वर है' यह भावना दृढ़ होना। नामस्मरणके सिवाय अन्य साधनोंमें कोई कृति करनी पड़ती है अर्थात् 'मैं कर्ता हूँ' भावनाका अहंकार होना सम्भव है। किंतु स्मरण मनका धर्म है, उसमें कृतिका प्रश्न पैदा ही नहीं होता, अत: अहंकारके लिये कोई गुंजाइश ही नहीं होती। इसके अलावा स्मरण या विस्मरण दोनों हमारे वशकी बात नहीं है। इसलिये जब नामका स्मरण होगा, तभी नामस्मरण करता हूँ, यह कहनेमें कोई तथ्य नहीं है। मैं नामस्मरणका कर्ता हूँ, यह बात टिक नहीं सकती, वैसे तो मैं नामस्मरण करता हूँ—यह शब्दप्रयोग भी ठीक नहीं है; क्योंकि नामस्मरण तो अपने-आप या अनायास होता रहता है। उसके बारेमें, मैं वह करता हूँ, कहना भी सही नहीं लगता। इस प्रकार शरणागतिके लिये नामस्मरण-जैसा दूसरा साधन नहीं है।

शरणागतिका दूसरा अर्थ है कायिक, वाचिक और मानसिक क्रियाएँ बन्द कर देना। क्रिया न करना क्रिया करनेकी अपेक्षा हमेशा अधिक सरल होता है, अत: शरणागति सहज साध्य लगनी चाहिये। लेकिन अनुभव ऐसा नहीं है। अनुभव तो यह है कि जो बात अत्यन्त सरल लगती है, वही प्राय: करनेमें कठिन होती है। किसीसे मोटर तेजीसे चलानेको कहें तो वह आसानीसे चला लेगा, लेकिन उससे यदि कहें कि बहुत धीरे चलाओ तो वह उसके लिये बहुत कठिन होगा। अत: कोई भी कृति न करना, कृति करनेकी अपेक्षा अधिक कठिन होता है। गीतामें भगवान्‌ने अर्जुनसे कहा है—'तू केवल मेरी शरणमें आ'। देहबुद्धि, वासना, अहंकार—ये सब एक ही हैं। संसारके वैभवके प्रति आसक्ति और परमात्माकी प्राप्ति—ये दोनों बातें साथ-साथ हो ही नहीं सकतीं। इसीलिये भगवान्‌ने उद्धवसे एकान्तमें जाकर हरिचिन्तन करनेके लिये कहा और समझाया कि ऐसा करनेसे ही मेरी सच्ची प्राप्ति होगी, इसका यह स्पष्ट अर्थ है कि संसारका त्याग किये बिना भगवत्प्राप्ति सम्भव नहीं। भगवान्‌की प्राप्तिके नियमों और व्यवहारमें एवं आवश्यक वस्तुओंकी प्राप्तिके नियमोंमें बहुत अन्तर है। मनमें वासना-निर्माण होते ही उसका समाधान करा लेनेके लिये देह और वस्तुओंकी हलचल करना व्यवहार है। सूक्ष्म वासनाका देहकी सहायतासे जड़स्वरूपमें परिवर्तित होना व्यवहारका सच्चा रूप है। किंतु भगवान्‌का ठीक इसके विपरीत है। भगवान् अत्यन्त सूक्ष्म हैं, उन्हें प्राप्त कर लेनेके लिये जड़से सूक्ष्म, अति सूक्ष्मकी ओर जाना पड़ता है। अत: उनकी प्राप्तिका साधन भी जड़से सूक्ष्मकी ओर पहुँचानेवाला चाहिये। जड़ देहसे सम्बन्धित और सूक्ष्मसे मिला हुआ साधन केवल नामस्मरण ही है।

[संग्राहक—श्रीगो०सी० गोखले]

साधकोंके प्रति—

प्राप्त परिस्थितिका सदुपयोग करो

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)

मनुष्यका कल्याण किसी परिस्थितिके अधीन नहीं है, अपितु उसके सदुपयोगमें है। कैसी ही प्रतिकूल परिस्थिति क्यों न हो, उसमें वह अपना कल्याण कर सकता है। मनुष्य परिस्थितिको बदलनेका प्रयास अधिक करता है कि निर्धनता चली जाय और धनवत्ता आ जाय, मूर्खता चली जाय और विद्वत्ता आ जाय, रोग चला जाय और नीरोगता आ जाय इत्यादि। इसीमें उसका बहुत समय चला जाता है। परंतु कल्याण करनेके लिये 'प्राप्त परिस्थितिका सदुपयोग कैसे किया जाय?'—इसपर विचार करें तो बहुत लाभ होगा।

संसारमें ऐसी कोई भी परिस्थिति नहीं है कि जिसमें जीवका कल्याण न हो सकता हो। कारण कि परमात्मा किसी भी परिस्थितिमें कम या अधिक, समीप या दूर नहीं हैं, अपितु प्रत्येक परिस्थितिमें समानरूपसे विद्यमान हैं। अत: प्रत्येक परिस्थिति परमात्माकी प्राप्तिमें साधक हो सकती है, बाधक नहीं। मनुष्य-जन्म परमात्माकी प्राप्तिके लिये ही मिला है और किन्हीं दो मनुष्योंकी भी परिस्थिति समान नहीं रहती। इसलिये किसी एक परिस्थितिमें ही परमात्माकी प्राप्ति होती हो तो सब मनुष्योंका कल्याण हो सकता है—यह बात नहीं कही जाती, अपितु यह कहते कि किसी एकका ही कल्याण होगा। अत: साधकको प्रत्येक परिस्थितिका सदुपयोग करना चाहिये। सदुपयोगके लिये पहले परिस्थितिको देखें कि वह हमारे अनुकूल है या प्रतिकूल? यदि प्रतिकूल है, तो उसमें अनुकूलताकी इच्छाका त्याग करना है। प्रतिकूल परिस्थिति दु:खदायी तभी होती है, जब सुखदायी परिस्थितिकी इच्छा करते हैं। इसलिये यदि सुखदायी परिस्थिति (अनुकूलता)-की इच्छाका त्याग करें, तो दु:खदायी परिस्थिति (प्रतिकूलता) विकासका कारण बन जायगी। ऐसे ही सुखदायी परिस्थिति आये, तो उसके सुख-भोगका और 'वह बनी रहे' ऐसी इच्छाका त्याग करना है; क्योंकि वह रहनेवाली है ही नहीं। उसका सुख स्वयं न भोगकर उसके द्वारा दूसरोंकी सेवा करनी है; क्योंकि अनुकूल परिस्थिति दूसरोंकी सेवाके लिये ही है, अपने सुख-भोगके लिये नहीं।

एहि तन कर फल बिषय न भाई। स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई॥

(मानस ७। ४३। १)

'त्याग' अर्थात् सुखका भोग नहीं करना और 'सेवा' अर्थात् दूसरोंको सुख पहुँचाना—ये दोनों ही चीजें करनेवाली हैं, जिसे प्रत्येक मनुष्य कर सकता है। त्यागमें सेवा होती है और सेवामें त्याग होता है।

मनुष्य दु:खपूर्ण परिस्थितिमें भी दूसरोंकी सेवा कर सकता है, दूसरोंको सुख पहुँचा सकता है। कोई कहे कि मेरे पास पैसे नहीं हैं, तो दूसरेको सुख कैसे पहुँचाऊँ! तो पैसोंसे ही दूसरोंको सुख पहुँच सकता हो—ऐसी बात नहीं है। हमारे हृदयमें दूसरोंको सुख पहुँचानेका भाव होना चाहिये। दूसरा दुखी है, तो उसके साथ हम भी हृदयसे दुखी हो जायँ कि उसका दु:ख कैसे मिटे? उससे प्रेमपूर्वक बात करें और सुनें। उससे कहें कि दु:खदायी परिस्थिति आनेपर घबराना नहीं चाहिये; ऐसी परिस्थिति तो भगवान् राम एवं नल, हरिश्चन्द्र आदि अनेकों बड़े-बड़े पुरुषोंपर भी आयी है; आजकल तो अनेक लोग तुम्हारेसे भी अधिक दुखी हैं; हमारे योग्य कोई काम हो तो कहना इत्यादि। ऐसी बातोंसे वह राजी हो जायगा। ऐसे ही सुखी व्यक्तिसे मिलकर हम भी हृदयसे सुखी हो जायँ कि बहुत अच्छा हुआ, तो वह राजी हो जायगा। इस प्रकार हम सुखी और दुखी—दोनों व्यक्तियोंकी सेवा कर सकते हैं, दूसरेके सुख और दु:ख—दोनोंमें सहमत होकर हम दूसरेको सुख पहुँचा सकते हैं। केवल दूसरोंके हितका भाव '**सर्वभूतहिते रता:**' निरन्तर रहनेकी आवश्यकता है। जो दूसरोंके दु:खसे दुखी और दूसरोंके सुखसे सुखी होते हैं, वे सन्त होते हैं—***'पर दुख दुख सुख सुख देखे पर'*** (मानस ७। ३७। १)।

एक शंका होती है कि हम पहले ही अपने दु:खसे दुखी हैं, फिर दूसरेके दु:खसे भी दुखी होने लगें, तो हम

तो हरदम रोनेमें ही रहे! हमारा दु:ख फिर कभी मिटेगा ही नहीं; क्योंकि संसारमें दुखी तो मिलते ही रहेंगे! इसका समाधान यह है कि जैसे हमारे ऊपर कोई दु:ख आनेसे हम उसे दूर करनेकी चेष्टा करते हैं, वैसे ही दूसरेको दुखी देखकर अपनी शक्तिके अनुसार उसका दु:ख दूर करनेकी चेष्टा होनी चाहिये। उसका दु:ख दूर करनेकी सच्ची भावना होनी चाहिये। अत: दूसरेके दु:खसे दुखी होनेका तात्पर्य उसके दु:खको दूर करनेका भाव तथा चेष्टा करनेसे है, जिससे हमें प्रसन्नता ही होगी, दु:ख नहीं। दूसरेके दु:खसे दुखी होनेपर अपने पास शक्ति, योग्यता, पदार्थ आदि जो कुछ भी है, वह सब स्वत: दूसरेका दु:ख दूर करनेमें लग जायगा। दुखी व्यक्तिको सुखी बना देना तो हमारे हाथकी बात नहीं है, पर उसका दु:ख दूर करनेके लिये अपनी सुख-सामग्रीको उसके अर्पित कर देना हमारे हाथकी बात है। इस प्रकार सुख-सामग्रीके त्यागसे तत्काल शान्तिकी प्राप्ति होती है—**'त्यागाच्छान्तिरनन्तरम्'** (गीता १२।१२)।

पातंजलयोगदर्शनमें आया है—

'मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदु:खपुण्यापुण्य-विषयाणां भावनातश्चित्तप्रसादनम्।' (१।३३) अर्थात् सुखीके साथ मैत्री, दुखीके साथ करुणा, पुण्यात्माके साथ प्रसन्नता पापात्माके साथ उपेक्षाकी भावना रखनेसे चित्त निर्मल होता है।

परंतु गीताने इन चारों बातोंको दोमें बाँट दिया है—**'मैत्र: करुण एव च'** (१२।१३)। तात्पर्य यह कि सुखी और पुण्यात्माको देखकर मैत्री हो एवं दुखी और पापात्माको देखकर करुणा हो। पापात्माकी उपेक्षासे उतना लाभ नहीं होता, जितना करुणासे होता है। मैत्री और करुणाके भावसे अन्त:करण निर्मल हो जाता है। सुखीको देखकर ईर्ष्या करनेसे और दुखीको देखकर अभिमान करनेसे अन्त:करण मैला हो जाता है। पापात्मासे घृणा-द्वेष करनेपर भी अन्त:करण मैला हो जाता है।

हमारे सामने चाहे जैसी परिस्थिति, अवस्था, देश, काल, व्यक्ति, वस्तु आदि आये, वह सब-की-सब परमात्माकी प्राप्तिमें साधन-सामग्री है। यदि मनुष्य उसका सदुपयोग करनेकी विद्या सीख जाय, तो फिर उसका कल्याण निश्चित है।

कैसी ही परिस्थिति क्यों न हो, उसका सदुपयोग करना चाहिये। यदि सदुपयोग करना न आये, तो सत्-शास्त्रोंमें देखे, सन्त-महापुरुषोंसे पूछे, स्वयं विचार करे, भगवान्‌को याद करे और उनसे प्रार्थना करे, तो सद्बुद्धि पैदा हो जायगी। उसके अनुसार आचरण करनेसे उद्धार हो जायगा। गीता हमें सिखाती है—

सुखदु:खे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि॥

(२।३८)

'जय-पराजय, लाभ-हानि और सुख-दु:खको समान समझकर, उसके बाद युद्धके लिये तैयार हो जा, इस प्रकार युद्ध करनेसे तू पापको नहीं प्राप्त होगा।'

'हरि' कीर्तनकी महिमा

लब्धं परं पदं तेन जन्मनां कोटिभिर्जितम्।
कीर्तितं येन मुनिना हरिरित्यक्षरद्वयम्॥
ज्ञातमध्यात्मशास्त्रं च प्राप्तं तेनामृतं पदम्।
कीर्तितं येन मुनिना हरिरित्यक्षरद्वयम्॥

(जमदग्निसंहिता)

कोटि जन्मोंकी साधनाके द्वारा जिस परमपदकी प्राप्ति होती है, उसी (परमपद)-को 'हरि' इन दो अक्षरोंका कीर्तन करनेवाले मुनि प्राप्त कर लेते हैं। 'हरि' इन दो अक्षरोंका कीर्तन करनेवाला मुनि अध्यात्मशास्त्रको जान लेता है और अमृतपदको प्राप्त हो जाता है।

गोस्वामी तुलसीदासजीकी युगलोपासना

(डॉ० श्रीरमेशमंगलजी वाजपेयी)

परम पूज्य गोस्वामी तुलसीदासजीकी भक्ति-भावना सीधी, सरल एवं सहज साध्य है। उनके प्रभु श्रीराम सृष्टिके कण-कणमें व्याप्त हैं, वे सभीके लिये उसी प्रकार सुलभ हैं, जिस प्रकार अन्न और जल। यथा—

निगम अगम, साहब सुगम, राम सांचिली चाह।
अंबु असन अवलोकियत, सुलभ सबहिं जग माह॥

उनकी यह भक्ति-भावना मूलत: लोकमंगलकी भावनासे अभिप्रेरित है। उन्होंने मर्यादापुरुषोत्तम रामके शील, शक्ति और अनुपम सौन्दर्यको लेकर उनके सभी लीलाचरितोंको आदर्शवादी धरातलपर प्रस्तुत किया है। निश्चय ही गोस्वामीजीका विश्व-विश्रुत ग्रन्थ—'रामचरितमानस' लोकसंग्रह, लोक-भावना और लोक-मंगलकी दृष्टिसे अद्भुत ग्रन्थ है। जो ***'सुख संपादन समन बिषादा'*** के सद्प्रयोजनसे प्रणीत तथा जिसमें ***'सार अंस सम्मत सबही की'*** है। अत: उनके इस दिव्य ग्रन्थमें सभी दार्शनिक तत्त्वों अथवा दर्शनके भिन्न-भिन्न सिद्धान्तोंकी छाया है। जिसे ग्रहणकर विद्वानोंने अपने विभिन्न मतोंके अनुरूप ही गोस्वामीजीकी भक्ति-भावनाका उल्लेख किया है। किसीने उन्हें विशिष्टाद्वैतवादी, किसीने भेदाभेदवादी, किसीने अद्वैतवादी तो किसीने उन्हें द्वैतवादी मानकर उनकी रामभक्तिपर प्रकाश डाला है। किंतु सत्य तो यह है कि तुलसी दार्शनिक न होकर भक्त-कवि हैं। वे प्रभु रामके अनन्य भक्त हैं। इसलिये वे सभी प्रकारसे यहाँतक कि सभी दार्शनिक सिद्धान्तोंकी दृष्टिसे राम-भक्तिका वर्णन करते हैं, किंतु उपासना-क्रममें अत्यन्त सरल विधान बताते हैं। ग्रन्थमें नवधा-भक्तिका उल्लेख करते हुए गोस्वामीजीके प्रभु श्रीराम, भक्त शबरीसे कहते हैं—

नव महुँ एकउ जिन्ह के होई। नारि पुरुष सचराचर कोई॥
सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरें। सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरें॥

(रा०च०मा०, अरण्यकाण्ड)

अर्थात् हे भामिनि! इन नवधा भक्तियोंमेंसे जिनके एक भी होती है, वह स्त्री-पुरुष, जड़-चेतन कोई भी हो, मुझे वही अत्यन्त प्रिय है। फिर तुझमें तो सभी प्रकारकी भक्ति दृढ़ है। तात्पर्य यह कि नवधा-भक्ति नौ प्रकारसे प्रभुकी उपासना है और इन सबका समाहार गोस्वामीजीने दास्य-भावकी भक्तिमें किया है—

सेवक सेब्य भाव बिनु भव न तरिअ उरगारि।
भजहु राम पद पंकज अस सिद्धांत बिचारि॥

(रा०च०मा०, उ०का० ११९ (क))

हे सर्पोंके शत्रु गरुड़जी! मैं सेवक हूँ और भगवान् मेरे सेव्य (स्वामी) हैं, इस भावके बिना संसाररूपी समुद्रसे तरना नहीं हो सकता। ऐसा सिद्धान्त विचारकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंका भजन कीजिये।

गोस्वामीजीकी यह दास्य-भक्ति केवल प्रभु श्रीरामकी चरणोपासनातक सीमित नहीं है। वे पूर्वमें ही कहते हैं—

गिरा अरथ जल बीचि सम कहिअत भिन्न न भिन्न।
बंदउँ सीता राम पद जिन्हहि परम प्रिय खिन्न॥

(रा०च०मा० १।१८)

जो वाणी और उसके अर्थ तथा जल और जलकी लहरके समान कहनेमें अलग-अलग हैं, परंतु वास्तवमें अभिन्न (एक) हैं। उन सीतारामजीके चरणोंकी मैं वन्दना करता हूँ, जिन्हें दीन-दुखी बहुत ही प्रिय हैं।

इस प्रकार गोस्वामीजी युगलसरकार श्रीसीतारामजीके चरणोंकी वन्दना करते हैं। एतत्-रूपसे उनकी युगलोपासनाकी बात प्रमाणित होती है। उनके समयमें ब्रह्मके अवतार अथवा उनके किसी लौकिक-बिम्ब (मूर्ति)-को स्थापित करके, उसकी भाँति-भाँतिसे पूजा-उपचार प्रचलित थे। वस्तुत: ब्रह्मकी सगुणोपासनाके क्रममें, उक्त पूजोपचारमें रागात्मिका-वृत्ति सम्मिलित होकर भक्तिको रस (आनन्द)-से परिपूर्ण कर देती है। यह विशुद्ध प्रेमकी सर्वोच्च स्थिति है। इस अवस्थामें हृदयकी अनन्य और कोमल माधुर्योपासना उस साकार ब्रह्म या परम-पुरुषके प्रति समर्पित होती है, जिसकी अनुग्रहकारिणी शक्ति (परम-प्रकृति) अखिल ब्रह्माण्डको धारण करती है। यह परम प्रकृति, परब्रह्मसे सूर्य और उसकी प्रभा या शब्द और अर्थ अथवा जल

और उसकी तरंगकी भाँति सम्पृक्त रहती है। ब्रह्मकी साकारता उसमें सन्निहित प्रकृति (शक्ति)-के कारण है। शैव और वैष्णव सम्प्रदायोंमें क्रमशः यह 'भवानी-शंकर' 'सीता-राम' या 'राधा-कृष्ण' से व्यक्त है। जैसे शिवमें प्रथम इकार (ि)-की मात्रा स्त्रीलिंग (अथवा प्रकृति)-की गणना होती है और उसकी अदृश्यता होनेपर शिव 'शव' (निर्गुण) हो निष्क्रियताको प्राप्त होता है। अतः दोनों (युगल)-की समवेत भक्ति ही पूर्णताको प्राप्त होती है। युगल-उपासना के मूलमें यही तथ्य है। युगल-मन्त्रजप (गायन), युगल-पद-वन्दन और युगल-उपासनाका प्रारम्भ यहींसे है। इसीसे प्रेरित महाकवि कालिदासने वाणी और अर्थसे सम्पृक्त पार्वती और परमेश्वरकी वन्दना करते हुए कहा—

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ॥

(रघुवंशम्)

इसी प्रकार काले बादलमें दामिनीकी भाँति शोभायमान कृष्ण और राधाकी चर्चा करते हुए महाकवि सूरदासजी कहते हैं—

रास मंडल मध्य स्याम-राधा।
मनौ घन बीच दामिनी कौंधति, सुभग एक रूप ह्वै नाहिं बाधा॥

ज्ञातव्य है कि स्वामी हरिदास (सन् १४७८-१५७३ ई०) गोस्वामी तुलसीदासके पूर्ववर्ती और रसमार्गके पथिक थे। उनके 'सखीभाव' के प्रेम-सिद्धान्तने तत्कालीन सभी वैष्णव-सम्प्रदायोंपर अपना प्रभाव छोड़ा। भावोपासना युगधर्म बन गयी। रसोपासना और युगल-मन्त्र-जप (गायन)-की परम्पराका विकास हुआ। गोस्वामी तुलसीदासके कुछ पूर्व रामभक्त कवि अग्रदासजी थे। जो स्वामी रामानन्दकी शिष्य-परम्परामें 'कृष्णदास पयहारी' से दीक्षा लेकर उनके शिष्य बने। उन्होंने 'अग्रअली' नामसे स्वयंको जानकीजीकी सखी मानकर काव्य-रचना की। इनकी सर्वप्रमुख रचनाओंमें 'अष्टयाम' अथवा 'रामाष्टयाम' की गणना होती है। इसका न्यूनाधिक प्रभाव परवर्ती राम-काव्यमें स्पष्ट दिखायी देता है। गोस्वामी तुलसीदास-विरचित 'रामचरितमानस' में युगल-पद-वन्दन अथवा युगल-उपासनाका संकेत भी उक्त ग्रन्थसे अभिप्रेरित प्रतीत होता है।

'रामचरितमानस' ग्रन्थमें युगल-ध्यान, वन्दन, स्मरणसम्बन्धी पर्याप्त काव्य-पंक्तियाँ हैं, जिनका प्रारम्भ मंगलाचरणके द्वितीय श्लोकसे है। यथा—

भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम्॥

(बालकाण्ड मंगलाचरण श्लोक २)

अर्थात् श्रद्धा और विश्वासके स्वरूप श्रीपार्वतीजी और श्रीशंकरजीकी मैं (तुलसी) वन्दना करता हूँ, जिनके (आश्रित होनेसे ही) या जिनके बिना सिद्धजन अपने अन्तःकरणमें स्थित ईश्वरको नहीं देख सकते।

ग्रन्थके इसी बालकाण्डकी प्रारम्भिक पंक्तियोंमें गोस्वामीजी सभीकी वन्दना करनेके पश्चात् अपने युगलसरकार श्रीसीतारामजीकी अभिन्नता वर्णित करते हैं। अनन्तर उन युगल-सरकारके चरणोंकी वन्दना करते हैं। यह एकमात्र दोहा भी गोस्वामी तुलसीदासजीके युगलोपासक होनेका पुष्ट प्रमाण है—

गिरा अरथ जल बीचि सम कहिअत भिन्न न भिन्न।
बंदउँ सीता राम पद जिन्हहि परम प्रिय खिन्न॥

(बालकाण्ड दोहा १८)

उक्त दोहेके ठीक पूर्व युगलपदध्यानकी दो भावपूर्ण पंक्तियाँ (एक चौपाई छन्द) हैं—

जनकसुता जग जननि जानकी। अतिसय प्रिय करुनानिधान की॥
ताके जुग पद कमल मनावउँ। जासु कृपाँ निरमल मति पावउँ॥

अर्थात् राजा जनककी पुत्री, जगत्की माता और करुणानिधान श्रीरामचन्द्रकी प्रिया श्रीजानकीजीके युगल पदकमलोंका ध्यान करता हूँ, जिनकी कृपासे मुझे निर्मल बुद्धि प्राप्त होगी। और फिर—

पुनि मन बचन कर्म रघुनायक। चरन कमल बंदउँ सब लायक॥
राजिवनयन धरे धनु सायक। भगत बिपति भंजन सुखदायक॥

अर्थात् फिर मैं मन, वचन और कर्मसे कमलनयन, धनुष-बाणधारी, भक्तोंकी विपत्तिका नाश करनेवाले और उन्हें सुख देनेवाले भगवान् श्रीरघुनाथजीके सर्वसमर्थ चरण-कमलोंकी वन्दना करता हूँ।

ग्रन्थमें युगलोपासनाके परिप्रेक्ष्यमें कुछ अन्य काव्य-पंक्तियाँ भी हैं, जिन्हें प्रमाणकी पुष्टिमें कहा जा सकता है—

सीतारामगुणग्रामपुण्यारण्यविहारिणौ ।
वन्दे विशुद्धविज्ञानौ कवीश्वरकपीश्वरौ॥

(बालकाण्ड, मंगलाचरण)

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चितचारु।
तुलसी सुभग सनेह बन, सिय रघुबीर बिहारु॥

(बालकाण्ड ३१)

राम बाम दिसि सोभति रमा रूप गुन खानि।
देखि मातु सब हरषीं जनम सुफल निज मानि॥

(उत्तरकाण्ड, ११ ख)

सियाराममय सब जगु जानी। करहुँ प्रनाम जोरि जुग पानी॥
राम सीय जस सलिल सुधासम। उपमा बीचिबिलास मनोरम॥
सीतारामचरन रति मोरे। अनुदिन बढ़उँ अनुग्रह तोरे॥

रामचरितमानस ग्रन्थमें अनेक ऐसी पंक्तियाँ हैं, जो युगलोपासनाके परिप्रेक्ष्यमें प्रमाणरूपसे प्रस्तुत की जा सकती हैं। इसके अतिरिक्त युगल-उपासना-सम्बन्धी गोस्वामी तुलसीदासविरचित 'युगलध्यानपद' एक अन्य लघु ग्रन्थ भी प्राप्त हुआ है। जिसकी खोजका दावा 'चन्ददास शोध संस्थान, बाँदा (उ०प्र०)' के निदेशक डॉ० चन्द्रिकाप्रसाद दीक्षित 'ललित' जी ने किया है। उनके अनुसार 'यह ग्रन्थ उन्हें चित्रकूटस्थित एक वृद्ध महिलाके घरसे प्राप्त हुआ है।' 'युगलध्यानपद' नामक यह लघु ग्रन्थ काली स्याहीसे प्राचीन हस्तनिर्मित भूरे रंगके कागजपर अंकित है। इसमें गोस्वामी तुलसीदासने सीता और रामके युगलस्वरूपकी वन्दना की है। डॉ० ललितके शब्दोंमें 'उक्त ग्रन्थकी भाषा-शैली, जीवन-दर्शन तथा बिम्बविधान तुलसीके अन्य प्रामाणिक ग्रन्थोंसे पूरी तरह मेल खाते हैं। उपमाओं और उत्प्रेक्षाओंका प्रयोग तुलसीदासजीने अपने अन्य प्रामाणिक ग्रन्थोंमें जिस प्रकारसे किया है, उसी प्रकारसे इस ग्रन्थमें भी किया है।

ग्रन्थकी पुष्पिकामें '**इति श्रीगोस्वामी तुलसीदासकृत प्रातःकालयुगलध्यानपद समाप्तम्॥ श्रीरामाय नमः॥**' अंकित है।

कविने अपना नाम देकर ग्रन्थको प्रमाणित किया है। अन्तिम पदमें भी तुलसीके नामकी छाप मौजूद है—

जो जुगल पद गावहिं सुपावहिं रिद्धि सिद्धि प्रकाम।
संशय निसरि विश्वास करि तुलसी जु भनत गुलाम॥

यहाँ तुलसीने अभिव्यक्तिके अर्थमें 'भनत' शब्दका प्रयोग किया है। 'दास' के अर्थमें पूर्वकी भाँति 'गुलाम' शब्दका प्रयोग किया है।

इसी प्रकार तुलसी राम और सीताकी अतुलनीय छविकी तुलना एक कामदेवसे न करके कोटि-कोटि कामदेवसे करते हैं। यथा 'युगलध्यानपद' में—

राजत युगल सीताराम
मनहुँ कोटिन कामिनी छबि, कोटि-कोटिन काम॥

तथा रामचरितमानसमें—***'कोटि मनोज लजावन हारे'*** का प्रयोग हुआ है।

ग्रन्थके अन्तमें धनुष और तीरका चित्र है। तुलसीको धनुष और तीर धारण किये श्रीराम अतिप्रिय हैं—

का छबि बरनउँ आपकी भले बने हौ नाथ।
तुलसी मस्तक तब नवै धनुष बान लेउ हाथ॥

इस ग्रन्थके शोधकर्ता डॉ० चन्द्रिकाप्रसाद दीक्षित 'ललित' द्वारा दिये गये उपर्युक्त तथ्योंके साथ यह भी ध्यातव्य है कि तुलसीके ठीक पूर्व स्वामी अग्रदास (अग्रअली) और तुलसीके ठीक पश्चात् स्वामी नाभादासने युगलोपासनाके क्रममें अपने 'अष्टयाम' अथवा 'रामाष्टयाम' का प्रणयन किया है। जिसमें 'युगलसरकार' 'सीताराम' पर केन्द्रित 'माधुर्यभाव'की उपासना विद्यमान है। डॉ० नगेन्द्र अपने ग्रन्थ 'हिन्दी-साहित्यका इतिहास' (पृष्ठ १८७)-में लिखते हैं—'अग्रअली' नामसे अग्रदास स्वयंको जानकीजीकी सखी मानकर काव्य-रचना किया करते थे। रामभक्ति-परम्परामें रसिक-भावनाके समावेशका श्रेय इन्हींको प्राप्त है। गोस्वामी तुलसीदासके समयतक तो रसिकताकी यह भावना प्रच्छन्न रही। कालान्तरमें रामभक्ति-परम्परामें भी रसमयी उपासना की जाने लगी। गोस्वामीजीके उक्त 'युगलध्यानपद' नामक ग्रन्थकी प्रामाणिकता अनेक मान्य समालोचकोंके द्वारा स्वीकार की गयी है। रामभक्त गोस्वामी तुलसीदासजी यद्यपि युगल सरकार श्रीसीतारामके श्रेष्ठ उपासक हैं। किंतु उनकी उपासनामें सखी-भावके बजाय दास्य-भावकी प्रधानता है; क्योंकि उनके मार्गदर्शक स्वयं श्रीहनुमान्‌जी हैं।

जीव-शिक्षा सिद्धान्त

[स्वामी श्रीहरिदासकृत अष्टादश पद]

[गतांकसे आगे]

चतुर्थ पद

हरि भजि हरि भजि छाँड़ि न मान नर तन कौ।
मति वंछै मति वंछै रे तिल तिल धन कौं॥
अनमाँग्यौ आगे आवैगौ ज्यौं पल लागै पल कौं।
कहिं श्रीहरिदास मींच ज्यौं आवै त्यौं धन है आपन कौं।

भावार्थ—हे नर! **नर तन** माने मनुष्यदेहका मान-माने अभिमान-आसक्ति छोड़कर सब समय, सर्वावस्थामें, सर्वात्मासे श्रीहरि—श्रीश्यामा-श्यामका एकमात्र भजन ही कर। अथवा हे नर! संसारके प्रपंचको छोड़कर **तनकौ**-माने तनिक थोड़ा श्रीहरिका भजन कर, भजन कर, यह बात मान ले, स्वीकार कर ले; क्योंकि मनुष्यजन्म दुर्लभ है और भजन तो अति दुर्लभ रत्नके समान है, इसलिये छोड़ मत, यह बात मान ले, स्वीकार कर ले। अरे साधक! **तिल-तिल** माने अत्यन्त तुच्छ धनकी वांछा-इच्छा मत कर, इच्छा मत कर। भक्तको धन माने सब वस्तु बिना माँगे ही एवं बिना प्रयास—उद्यम किये ही अपने-आप प्राप्त होती है। इसमें दृष्टान्त देते हैं, जैसे अपने स्वभाव-सों ही एक पलक दूसरी पलक-सों लग जाती है, किंतु न लगनेका प्रयास करे, तो भी रुकती नहीं। ऐसे ही अनिच्छा करनेपर भी भक्तको भगवत्कृपा-सों ही सब वस्तुएँ पलमात्रमें प्राप्त हो जाती हैं।

श्रीस्वामी हरिदासजी महाराज कहते हैं—**'मीच'** माने आँखें मीचना, माने मृत्युके समान अपने लिये धनको जानो। अनेक अवगुण, दोष धनमें हैं। प्राणी धनमदमें मदान्ध होकर अनेक विपरीत, विरुद्ध पाप-कर्म करके महान् अधम दुष्टगतिको प्राप्त हो जाता है। अथवा भक्तको मृत्युके अनन्तर मिलनेवाला धन तो प्रिया-प्रियतमरूप ही है। वह केवल भक्तिसे ही मिलता है। उसका साधन श्रीहरिका भजन ही है।

पंचम पद

ए हरि मोसौ न बिगारनि कौं तोसौ न सँवारनि कौं
मोहिं तोहिं परी होड़।
कौनधौं जीतै कौनधौं हारै पर बदी न छोड़॥
तुम्हारी माया बाजी पसारी विचित्र
मोहै सुनि मुनि काके भूलै कोड़।
कहिं श्रीहरिदास हम जीते हारे तुम तऊ न तोड़॥

भावार्थ—हे हरे! मेरे समान न तो कोई बिगाड़ने (बुरा करने)-वाला है, और आपके समान न कोई सम्भालने (सुधारने, बनाने)-वाला है, हमारी और आपकी होड़ (स्पर्धा) पड़ रही है। अब देखें, कौन जीतता है और कौन हारता है। परंतु अब जो होड़ बदी है, उसे छोड़ना नहीं। प्रश्न उठा कि तुम जानते हुए भी ऐसे विपरीत क्यों कर रहे हो, तो कहते हैं कि आपकी मायाने विचित्र बाजी पसारी है। मायामोहमय खेलको फैला रखा है। जिसमें बड़े-बड़े मननशील ऋषियोंकी भी भूलें सुननेमें आती है। ये सब **काके**-कौनकी, किसकी कोड़-क्रोड़ अर्थात् गोदमें भूले? अर्थात् मायाकी गोदमें भूले हैं, इससे भी वे अनभिज्ञ हैं, अर्थात् इसका भी उन्हें पता नहीं है; जैसे बालक माँकी गोदमें सुख मानता है। रसिक-अनन्य-नृपति श्रीस्वामी हरिदासजी महाराज कहते हैं कि 'प्रभो! हम जीत गये और आप हार गये; तब भी आप इस होड़को तोड़ते-छोड़ते नहीं हो।

षष्ठ पद

बन्दे अखतियार भला, चित न डुला।
आव समाधि भीतर न होहु अगला॥
न फिर दर दर पिदर दर न होहु अँधला।
कहिं श्रीहरिदास कर्ता किया सो हुआ सुमेर अचल चला॥

भावार्थ—हे **बन्दे** मनुष्यशरीरप्राप्त जन! तुमको अच्छा अधिकार सत्-असत्, तत्त्व-अतत्त्व, धर्म-अधर्म आदिका निर्णय करने, मनपसन्द इच्छानुसार ग्रहण करनेका अधिकार प्राप्त हुआ है। यह अधिकार प्रभुने ही दिया है। इसलिये चित्त डुला मत—चंचल मत कर। चित्तको रोककर अन्तःस्थ—हृदयमें स्थित होकर

श्रीविहारीजीके ध्यानमें, भावनामें मग्न हो जा, अर्थात् चित्तकी वृत्तियोंको रोककर उनमें लगा। उनकी मधुर लीलाओंका अनुसन्धान कर, चिन्तन कर। जिससे अगला—नाम पहले जैसी अनेक योनियोंमें भटकते हुए दुर्गति भोगी, वैसे ही फिर आगे भोगनी न पड़े।

दर नाम—द्वार—दरवाजा। सो द्वार, द्वार-माने अनेक देवी-देवताओंके दरवाजे-दरवाजे मत फिर, उनकी कामना मत कर। **पिदर दर** नाम पिताके द्वारपर भी मत फिर, अर्थात् ऐसा उपाय कर जो माता-पिताका द्वार देखना न पड़े अर्थात् जन्म-मरणसे छूटनेका उपाय कर। अन्धा मत बन अर्थात् एक श्रीविहारीजी ही सबके माता-पिता, रक्षक, स्वामी, सर्वस्व हैं, वे सम्पूर्ण कामनाओंको पूरी करनेवाले और परम सुखको देनेवाले हैं, उनको पहचान और उनकी भक्तिकर सेवन कर।

रसिक-अनन्य-नृपति श्रीस्वामी हरिदासजी महाराज कहते हैं कि 'श्रीविहारीजी सब कर्ताओंके कर्ता प्रभु हैं, वे जो करते हैं, वही होता है।' सुमेरुपर्वत अचल है, उसे भी वे चलायमान कर सकते हैं; क्योंकि वे सर्वसमर्थ हैं।

सप्तम पद

हित तौ कीजै कमलनैन सौं जा हित के आगे
और हित लागै सब फीकौ।
कै हित कीजै साधु संगति सौं ज्यौं कल्मष जाइ सब जी कौ॥
हरि कौ हित ऐसौ जैसौ रंग मजीठ
संसार हित रंग कसूँभ दिन दुती कौ।
कहिं श्रीहरिदास हित कीजै श्रीबिहारी जू सौं
ओर निबाहु जान जीकौ॥

भावार्थ—कमलके समान हैं नेत्र जिनके, ऐसे कमलनयन श्रीविहारीजी, उन्हींसे हित—प्रेम-सम्बन्ध करना चाहिये। **जा हित**—श्रीविहारीजीकी जिस प्रीतिके आगे **और हित** माने और समस्त सांसारिक प्रीति फीकी, तुच्छ, नीरस, अनिष्टको देनेवाली होती है। श्रीहरिसे जो हित—प्रेम है, वह परम पुरुषार्थका दाता है।

कै—माने या, अथवा उन्हींके स्वरूपभूत प्रेममें रँगे हुए साधु-सन्तोंकी संगतिसे प्रेम करना चाहिये। **ज्यों** माने जिससे-अर्थात् महात्माओंके संग प्रेम करनेसे जीजिय हृदयका कल्मष सब पाप-ताप दूर होते हैं।

श्रीहरि—श्रीविहारीजीमें किया हुआ **हित** नाम प्रेम है, वह मजीठके रंगके समान **टिकाऊ** नाम सदा स्थायी है, अर्थात् कभी छूटता नहीं है और संसार-सम्बन्धी जो **हित** प्रेम है, सो कुसुंभके रंगके समान अस्थिर है, क्षणिक है, अर्थात् धूप लगनेसे ही दो दिनमें उड़ जाता है।

रसिक-अनन्य-नृपति श्रीस्वामी हरिदासजी महाराज कहते हैं कि 'हित—प्रेम तो एकमात्र श्रीविहारीजीसे ही करना चाहिये। वही परम कल्याणकारी है। उन्हींको **ओर** नाम अन्ततक जीवका **निबाहु** नाम निबाहनेवाले (निर्वाह करनेवाले) जान। अर्थात् उन्हींसे प्रेम करनेसे जीवका निर्वाह है। संसारी जीव अन्ततक निर्वाह नहीं कर सकते हैं। उनकी तो स्वल्पकालकी मित्रता होती है। इसलिये संसारसे सम्बन्ध छोड़ और श्रीविहारीजीसे हित कर।

अष्टम पद

तिनुका ज्यौं बयारिं के बस।
ज्यौं चाहै त्यौं उड़ाय लै डारै अपने रस॥
ब्रह्म लोक सिव लोक और लोक अस।
कहिं श्रीहरिदास विचार देखौ बिना बिहारी नाहिं जस॥

भावार्थ—तिनुका—तृण पवनके वशमें है। अर्थात् परतन्त्र है। पवन अपनी इच्छानुसार **जहाँ चाहै** नीचे-ऊँचे, वहाँ उसे उड़ाकर ले जाता है। ऐसे ही तृणके समान यह जीव है। यह ईश्वरके तन्त्र—अधीन है। सो जैसी ईश्वरकी इच्छा होती है, उसी भाँति यह जीव कर्मवश ऊँच-नीच अनेक लोकोंमें भ्रमण करता रहता है।

ब्रह्मलोक, शिवलोक और लोक—और स्वर्गादि बहुत-से लोक हैं, **अस** माने इसी प्रकार वे सब श्रीहरिके अधीन हैं। उन लोकोंमें भगवान् श्रीहरि इस जीवको कर्माधीन ले जाते हैं।

रसिक-अनन्य-नृपति श्रीस्वामी हरिदासजी महाराज कहते हैं कि 'हमने अच्छी प्रकारसे विचार करके देख लिया कि इन लोकोंमें श्रीविहारीजीका यश नहीं है, वे भगवद्गुणरहित हैं। इससे ब्रह्मलोक, स्वर्गलोकादि भी हेय—त्याज्य हैं। [क्रमशः]

संत-स्मरण

(परम पूज्य देवाचार्य श्रीराजेन्द्रदासजी महाराजके गीताभवन, ऋषिकेशमें हुए प्रवचनसे साभार)

❀ भक्त प्रह्लादजी कहते हैं—'**अमलया भक्त्या**'—निश्छल प्रेमसे कल्याण। इसका उदाहरण मिला गनपत भगतके जीवनमें। लगभग सन् २००७ की बात है। गरीब केवट परिवारका सीधा-सादा ग्रामीण था वह, छोटी-सी खेती, उसीसे परिवारका भरण-पोषण होता था। भक्तमालीजी महाराजकी कथा सुनी उसने गाँवमें। सुना कि पीपलके वृक्षमें नारायण, वटवृक्षमें भगवान् शिव और पाकड़में ब्रह्माजीका वास रहता है। वे वृक्ष पूज्य हैं। संयोगवश उसे लीवरका कैंसर हो गया। शहरके महँगे उपचारकी उसकी सामर्थ्य नहीं। उसने परिवारवालोंसे कहा कि अब मैं खेतपर ही रहूँगा। उसकी इच्छानुसार उसे खेतपर पहुँचा दिया गया। उसने कथाकी बात याद करके वृक्षोंकी उपासना शुरू कर दी। रोज पीपल, वट और पाकड़के पेड़में पानी दे, उसीको भगवान्का चरणामृत समझकर पीये और वहाँकी मिट्टीको उठाकर पेटपर लगा ले। कुछ समय बाद उसे भूख लगने लगी और उसे स्वस्थताकी प्रतीति होने लगी। डॉक्टरोंने जाँचकर बताया कि इसे अब कोई रोग नहीं है। उसने सत्यनारायण कथा करायी और परिवारसे कहा कि 'अब केवल भजन करेंगे, घरपर नहीं रहेंगे।' वृन्दावन आ गया। महाराजजीने गोसेवामें लगा दिया। कुछ समय बाद उसने कहा कि मुझे ओरछाकी याद आती है। महाराजजीने उसे वहीं रहकर भजन करनेका आदेश कर दिया। वहाँ हनुमान्जीके एक टूटे-से मन्दिरमें वह रहता था, तुलसीवृक्षोंकी बगिया लगा रखी थी, नित्य रामराजा सरकारकी सेवामें बगियाके फूल-तुलसी ले जाता। एकादशीके दिन वह मन्दिर नहीं पहुँचा, तब पुजारीजीको याद आयी। वे वहाँ गये तो देखा कि तुलसीकी बगियाके बीचमें वह तिलक लगाये बैठा है, हाथमें माला है, आँखें खुली हैं और वह परमधामको जा चुका है। लोगोंने उस सन्तका उत्सव मनाया। उसने केवल सुना ही नहीं, हृदयसे मान भी लिया कि इन वृक्षोंमें ब्रह्मा-विष्णु-महेशका वास है और यही 'अमलया भक्त्या' का तात्पर्य है।

❀ वल्लभाचार्यजी महाराज बरसानेकी परिक्रमा कर रहे थे। मार्गमें एक अजगर पड़ा मिला, जिसके शरीरमें चीटियाँ लगी हुई खून चूस रही थीं। शिष्योंके पूछनेपर बताया कि यह पूर्वजन्मका मठाधीश है, किसी भी शिष्यको भगवत्प्राप्ति नहीं करा पाया। वे ही चीटियोंके रूपमें इसका खून चूस रहे हैं। महाराजने भागवत सुनाकर उसकी सद्गति करायी।

❀ वृन्दावनमें एक बैंकके कैशियर गीता-भक्त थे। उनका विश्वास था कि भगवान् श्रीकृष्णने श्रीमद्भगवद्गीतामें अर्जुनको आदेश दिया है—'**मामनुस्मर युद्ध्य च**' जब भगवत्स्मरण करते हुए युद्धमें तलवार चलायी जा सकती है, तब आफिसमें उनका स्मरण करते हुए कलम क्यों नहीं चलायी जा सकती? अत: उन्होंने मनमें गीता-पाठ करते हुए ऑफिसका सारा काम सुचारु रूपसे करनेका अभ्यास बना लिया। दिनभरमें वे काम करते हुए गीताकी तीन-चार आवृत्ति कर लेते थे।

❀ गदाधर भट्ट जब श्रीकृष्णचरितका गायन करते थे, तब प्रेमाश्रुकी धारा उनके नेत्रोंसे बहने लगती थी। श्रोतागण भी विह्वल हो जाते। जिस आश्रममें आयोजन था, वहाँके महंतजीके नेत्रोंमें कोई आँसू नहीं आवें। उन्हें लगा कि भक्तजनोंके बीच उनकी इस बातके लिये आलोचना हो सकती है, अत: एक दिन भट्टजीके कीर्तनमें उन्होंने लाल मिर्चका चूर्ण आँखोंमें छुआ लिया, जिससे अश्रुधारा बह चली। कीर्तनके अन्तमें गदाधर भट्टजीने सोचा कि इनके भीतर सहज प्रेम नहीं उमड़ता, किंतु ये चाहते तो हैं। ऐसा सोचकर उन्होंने महंतजीको साष्टांग प्रणाम किया। अपराधबोधसे महंतजीने निवेदन किया कि जो आँखें भगवत्प्रेममें गीली न हों, उनके लिये मिर्च ही ठीक है। भट्टजीने उन्हें हृदयसे लगा लिया और उनमें भी सहज प्रेमकी धारा उमड़ने लगी।

मैं और मेरा जीवन

(ब्रह्मचारी श्रीत्र्यम्बकेश्वरचैतन्यजी महाराज, अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ)

मैं क्या हूँ? मैं कौन हूँ? मैं कहाँसे आया हूँ? मैं कहाँ जा रहा हूँ? मैं क्या कर रहा हूँ? मुझे क्या करना चाहिये? मैं क्यों जी रहा हूँ? मेरे जीवनका उद्देश्य क्या है? इत्यादि प्रश्न कभी आपके मनमें उठते हैं कि नहीं? यदि उठते हैं तो उत्तर क्या मिलता है? यदि नहीं उठते तो फिर आप अपने विषयमें इतने बेखबर क्यों हैं? दुनियाकी जानकारी रखते हैं, दुनियासे मिलने और बात करनेकी, जाननेकी ललक है, परंतु स्वयंसे अनभिज्ञ हैं। ये जान लीजिये—जो खुदको नहीं जानता, वह किसीको जान सकता नहीं। जो खुदको जान गया, उसे किसी औरको जाननेकी आवश्यकता नहीं है।

उसने जिन्दगीमें बहुत बड़ी बात कर ली।
जिसने अपने आपसे मुलाकात कर ली॥
कः कालः कानि मित्राणि कौ च स्तः मे व्ययागमौ।
कः शत्रुः किं च मे लक्ष्यं इति चिन्त्यं मुहुर्मुहुः॥

(समय कैसा है? मेरे मित्रजन कौन हैं? मेरे शत्रु कौन हैं? मेरे जीवन जीनेका लक्ष्य क्या है? मेरे आय-व्ययके साधन क्या हैं? ऐसा सोचकर ही व्यक्तिको हमेशा आगे बढ़ना चाहिये। मेरे नियन्त्रणमें रहनेवाली मेरी इन्द्रियाँ ही मेरी मित्र हैं तथा अनियन्त्रित इन्द्रियाँ ही शत्रु हैं। मेरा जीवन अमूल्य है, प्रत्येक साँस खर्च करके मैं क्या पा रहा हूँ? भगवत्प्राप्तिका लक्ष्य कितनी दूर है? समय कैसा है? सन्ध्या होनेसे पहले, जीवनकी शाम होनेसे पहले मंजिलको पाना है, यही बार-बार सोचें।

मैं क्या हूँ? मैं कौन हूँ? ये प्रश्न कौन पूछ रहा है? किससे पूछ रहा है? स्वयं-से-स्वयंके विषयमें ये स्वयं कैसे पूछता है? स्वयंके लिये ही स्वयं अज्ञ जैसे स्वयं जूझता है। मैं देह नहीं हूँ, मैं देही आत्मा **चेतना** हूँ। कैसा आश्चर्य है, जो दीख रहा है, वह है नहीं और जो है, वह दीखता नहीं। दीखनेवालेसे (दृश्यसे) कितना लगाव है जबकि देखनेवाला द्रष्टा (साक्षी, जीवात्मा) अपना खास होनेपर भी भुला दिया गया है, जिसके बिना ये सब प्रपंच अस्तित्वहीन है। उसके बारेमें विचार ही नहीं करते हैं।

आरामं तस्य पश्यन्ति न तं पश्यति कश्चन॥

उसके बनाये हुए संसारको, रूप-रंगको, यौवन-शैशवको, सोना-चाँदीको, वैभव-विस्तारको, सागर-सरिताको, वन-पर्वतोंको देखकर मगन है, मगर जिसने बनाया, उसे कोई नहीं खोजता कि भाई! इतनी सुन्दर दुनिया बनानेवाला कितना सुन्दर होगा? मोरका पंख, तोतेकी चोंच कितना गजब खेल है, अहा! जड़ और चेतनका विचित्र घाल-मेल हो गया। यद्यपि सब जानते हैं कि बिना चेतनके सकल प्रपंच अस्तित्वविहीन है। वायुयान, ट्रेन, बस, कार, बाइक, साईकिल, बड़ी-बड़ी मशीनें—ये बिना किसी चेतनके क्रियाशील नहीं हो सकते। यदि आप कहें कि आज विज्ञानने बहुत प्रगति की है, मनुष्यकी आवश्यकता नहीं, रिमोटसे सब चल सकते हैं। ठीक है परंतु मेरे भोले भाई! रिमोटको चलानेके लिये भी तो कोई चेतन ही चाहिये।

जड़ चेतनहिं ग्रन्थि परि गई, जदपि मृषा छूटत कठिनई॥

आप किसीसे पूछो—भाई! अपना पता बताओ, तो सुनते ही वह अपना कार्ड निकालेगा अथवा अपना पता लिखाने लगेगा। अमुक नं० मकान, गली, मुहल्ला, शहर, जनपद, प्रान्त आदि। अब उससे पूछो कि ये तुम्हारा पता है या तुम्हारे घरका? तो वह आपको पागल ही समझेगा कि कैसा इंसान है? क्या प्रश्न किया है? आप पूछ लीजिये भाई! अपना नम्बर बतायें तो मोबाईल नम्बर देगा। अपना पता है ही नहीं, सोचा ही नहीं, खोजा ही नहीं तो दे कहाँ से। आप केवल किसी औरसे ही मत पूछना, कभी दर्पणमें खुदको देखकर खुदसे ही पूछना। सचमुच जितना खुदको खोजोगे उतना खोते जाओगे। जिस शरीरको हम स्वयंका रूप माने बैठे हैं, बहुत बड़ी भ्रान्ति है। शरीर मैं नहीं हूँ, अपितु शरीर मेरा है। ये नाम मैं नहीं अपितु नाम मेरा है। ये रूप मैं नहीं बल्कि रूप मेरा है। ये घर मैं नहीं अपितु घर मेरा है। ये नाक, कान, आँख, सिर, हाथ, पैर, बाल, नखसे

शिखातक कुछ भी इस शरीरमें मैं नहीं हूँ, सब कुछ मेरा है। उफ! कितने भ्रममें जीते हैं हम। जैसे मैं (त्र्यम्बकेश्वर) मेरे घरसे अलग हूँ, वैसे ही मैं (चेतनात्मा) इस शरीरसे अलग हूँ। अतः ये बात साफ है कि जैसे मैं मेरा घर नहीं हो सकता, वैसे ही मैं मेरा शरीर नहीं हो सकता।

अब और खोजें, आगे बढ़े। ये ज्ञानेन्द्रियाँ, कर्मेन्द्रियाँ मेरी हैं, मैं नहीं, ठीक वैसे ही ये मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार तथा अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय कोश भी मैं नहीं हूँ। जैसे घरके विविध विभाग मैं नहीं, ठीक वैसे ही देहकी बाह्यावस्था तथा आन्तरिक अवस्था भी मैं नहीं। ये कल्पित नाम-रूप व्यर्थमें मेरे ऊपर आरोपित हो गये। कबसे? क्यों? इसका विचार करें? भाई! हो सकता है लेख कुछ भारी होने लगा हो। विचार थोड़ा बोझिल, गंभीर हो रहा हो, परंतु ध्यान रखना ये विचार ही सन्मार्गका उपदेशक सद्गुरु है। इसीसे कोई प्रकाशकी किरण चेतनाको भ्रमके अंधकारसे परे जानेकी राह दिखायेगी। अब और आगे बढ़ें। भाई! ये घर-दुकान, मकान, खेत-खलिहान, नौकर-चाकर, गाड़ी-घोड़ा, धन-दौलत, परिजन, पुरजन, प्रियजन, अरिजन कोई भी मेरा नहीं है। इनको अपना मानते ही मृत्यु है, बन्धन है, दुःख है, नरक है।

ममेति बन्धनं प्रोक्तं न मम मुक्तिरुच्यते।

मम=मेरा, ममता=मेरेपन का भाव (अपनेपनका भाव) ही बन्धन है। न मम=मेरा नहीं, ये दृढ़ भाव ही मुक्ति है। ठीक ऐसे ही यह देह-इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार भी मेरा नहीं है, संयोगमात्र है। प्रत्येक जन्ममें सब कुछ नया होता है फिर बात स्पष्ट है कि यदि ये सब मैं हूँ, तो मैं इनके बिना और ये मेरे बिना कैसे रह सकते हैं। दूसरी बात, यदि ये मेरे हैं, तो सदा साथ क्यों नहीं रहते? सीधी-सी बात है। संसारमें जो कुछ भी है, वह न तो मैं हूँ और ना ही वह सब कुछ मेरा ही है।

पूज्य स्वामी श्रीअखंडानंदजी महाराजकी पुस्तकमें एक दृष्टान्त पढ़ा था। ट्रेनकी यात्राके समय एक स्टेशनसे कोई सुवेशधारी सम्भ्रान्त गम्भीर व्यक्ति चढ़ा, उसके साथ बहुत बड़ा बक्सा (सन्दूक) था, उसके पास जो व्यक्ति पूर्वसे बैठा था, उसने उत्सुकतावश पूछना चाहा तो नवागत ने गंभीर प्रश्नवाचक नजरोंसे घूरकर इसे चुप रहनेको मजबूर कर दिया। चार-पाँच स्टेशन बाद एक बड़े स्टेशनपर ट्रेन रुकी, वह सम्भ्रान्त नवागत सज्जन उठे और चाय पीनेके बहाने स्टेशनपर उतर गये। ट्रेन सीटीके साथ सरकी, फिर सरपट दौड़ने लगी, परन्तु नवागत व्यक्ति नहीं आया। प्रतीक्षा, सोच, बिना मतलबकी चिन्तामें दो-चार स्टेशन गुजरे, पर कोई नहीं आया। अचानक टीटी आ गया। टिकिट चैक किया तथा उस बड़े सन्दूक (बक्सा)-के बारेमें पूछा—ये किसका है? ये बेचारा इंसान हड़बड़ीमें बोला कि मेरा है, जब व्यक्ति अचानक झूठ बोलता है तो दिल धड़कता है, प्रथम बार पाप करनेपर बहुत भय चिन्ता होती ही है, फिर अभ्यास होनेपर व्यक्ति अपनी आत्माकी आवाजको दबा देता है। टीटीने पूछा—ये आपका ही है न, तबतक हिम्मत बटोरकर तपाकसे बोला, हाँ भाई, हाँ! आप शक क्यों करते हैं, मेरा ही है। टीटीके जानेके बाद इसका मन-मयूर नाचने लगा, सोच रहा है, सपने देख रहा है, कल्पनालोककी सैर में खोया है। बड़ा आदमी था, भारी बक्सा है, कीमती सोना, चाँदी, जवाहरात होगा, जीवन बदल जायगा, बैठकर मजे से खाऊँगा। (यद्यपि मजा खाली बैठकर खाने-सोने में नहीं है। नित्य कुछ करके खाने में ही है, परंतु इंसानकी विपरीत सोच) इसने सन्दूक उठानेकी कोशिश की, नहीं उठा, उठाना तो दूर हिलातक नहीं। बस खो गया भविष्यके सपने बुननेमें। समयको खराब करनेके दो साधन हैं—अतीतकी घटनाओंपर शोक तथा भविष्यकी चिन्ता, परंतु अतीतकी अफसोसभरी चर्चा तथा भविष्यके सुमधुर सपने अधिक कारगर होते हैं वर्तमानको मिटानेमें। अचानक गन्तव्य आ गया, स्टेशनपर गाड़ी रुकी। इसने दो कुली बुलाकर मुश्किलसे सन्दूकको प्लेटफार्मपर उतरवाया कि चारों ओर पुलिस-ही-पुलिस, सायरनकी आवाजसे अफरा-तफरी मची, परंतु ये बेखबर टैक्सी खोज रहा था, तभी पुलिस अधिकारीने रौबदार आवाजमें कड़ककर पूछा—ये सन्दूक किसका है? इसने कहा कि साहब! मेरा है। सन्देहकी नजरोंसे देखते हुए अधिकारीने कई बार पूछा, परंतु हर बार पूरी दृढ़तासे यह बोलता—मेरा है। चाबी माँगनेपर बोला घर भूल गया था। पुलिसने ताला तोड़ा तो उसके होश उड़ गये। उस बक्सेमें भारी कटी हुई लाश पड़ी थी। अब ये रोता है, बिलखता है, चिल्लाता है,

कसम खाता है कि मेरा बक्सा नहीं है। न मम, न मम, मेरा नहीं, मेरा नहीं, परंतु पुलिस इसको कैद करके ले गयी। बेचारा बिना मतलब, प्रलोभनकी आशामात्रमें मारा गया।

अरे! आप तो कहानीमें खो गये, भाई! ये घटना सत्य है और वह अभागा यात्री कोई और नहीं, आप ही हैं। बिना मतलबके सुखकी आशामें, जो कि कभी मिल नहीं सकता; क्योंकि संसार तो दुःखका घर है। (**दुःखालयम् अशाश्वतम्**) हम भी मुर्दोंको अपना मानकर परतन्त्रताकी बेड़ियोंमें कैद हो जाते हैं, न ये जमीन काम आती है, न सोना-चांदी। न मित्र-शत्रु, न भाई-बहन। न पति-पत्नी, न गुरु-चेला। मेरे कर्मोंका फल मुझे ही भोगना पड़ता है। दुनियाके लोग आँसू गिरा सकते हैं, तुम्हारे साथ रो सकते हैं, परंतु आँसू मिटाने का सामर्थ्य किसीमें नहीं। दर्द होनेपर दवा दिला सकते हैं, सेवा कर सकते हैं, संवेदना व्यक्त कर सकते हैं, परंतु दर्द नहीं बाँट सकते। ये दर्द तो हमको ही सहन करना पड़ेगा। पुनः प्रश्न तो वहींका वहीं रहा। मैं कौन हूँ? कमसे भी कम जो दीख रहा है, ये सब तो मैं नहीं हूँ।

गो गोचर जहँ लगि मन जाई । सो सब माया जानेहु भाई॥

भगवान् शंकराचार्यके शब्दोंमें कहें तो स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण—इन त्रिविध शरीरोंसे परे, अन्न-प्राण-मन-विज्ञान-आनन्द—इन पाँचों कोशोंसे अतीत, जाग्रत्-स्वप्न-सुषुप्ति—इन तीनों अवस्थाओंका साक्षी जो तत्त्व है, वही आत्मा है, वही जीव है, वही मैं हूँ। विशेष ज्ञानके लिये तत्त्वबोधपर की गयी हिन्दी टीका पढ़ें। ग्रन्थ-पन्थ-सन्त-उपदेशादि सब केवल संकेतभर कर सकते हैं। जैसे मीलका पत्थर साथ नहीं चलता, राह बता देता है, वैसे ही समाधान अन्दर ही मिलेगा, आपको ही खोजना है, खोजो, उतरो अन्दर...।

अब विचार करें कि मेरा ये जीवन कैसा होना चाहिये? परमात्माने कृपा करके अँधेरेसे निकाला। कर्म करनेकी क्षमता देकर मनुष्य बनाकर रंगमंचपर उतार दिया, उजालेमें पहुँचा दिया। हम ऐसा कार्य करें कि भगवान्का भरोसा न टूटे। हम जब लौटकर भगवान्के पास जायँ तो भगवान् खुश होकर गले लगाकर कहें कि बेटा! धन्य है तू और तेरी कृति, तुमने मेरे जगत्-रूपी उपवनकी सुरक्षाके लिये जो किया, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। देखो! इतना न हो सके तो इतना ध्यान तो अवश्य रखना, जिससे हमको भगवान्से आँखें मिलानेमें लज्जा आये, वहाँ जाकर नजरें झुकानी पड़े और भगवान् कहें कि तुम मनुष्य बनने लायक नहीं। अभी तुम अंधेरेमें रहो और फिर कूकर, सूकर, कीट, पतंगादि शरीरोंकी यात्रा शुरू हो जाय।

मतलब साफ है, इस संसारमें हम सब अकेले आये अकेले ही जायँगे। नंगे आये, नंगे ही जायँगे। खाली हाथ आये, खाली हाथ जायँगे। इस जीवनकी शुरुआत अकेलेपन, खालीपन, नंगेपनसे होती है। इस जीवनका अन्त भी अकेलेपन, खालीपन तथा नंगेपनसे ही होता है, तब फिर हम बीचका समय कहाँ खो रहे हैं। थोड़े दिनका मेला है, झमेला है, तब क्यों बेकारमें झूठ-पाप, छल-कपट करके मनकी पवित्र चादरपर गंदगीके दाग लगायें। संसारका सम्मान, सम्पत्ति, सुन्दरता, वस्तु, कुछ भी साथ जाना नहीं, तो इसके लिये गलत रास्ते क्यों चुनें? आज नहीं छूटेगा तो कल छूटेगा, छूटना तो यह है ही। तब दुःख किस बातका! मरना तो है ही फिर भय किस बातका! हम सच्चाईके रास्तेसे चलें। सदाचारकी सुगन्धसे समाजको महकायें। पुरुषार्थका दीप जलाकर अकर्मण्यताके अँधेरेको यथाशक्ति मिटायें। अशक्तों, असहायोंके आँसू पोंछकर उनके मुरझाये चेहरोंपर मुस्कराहट ला सकें तो हमारा जीवन सार्थक होगा। अपने लिये जीना भी कोई जीना है क्या? पशु, पक्षी, कीट, पतंग भी पेट भरते मस्त रहते हैं। हमारा जीवन राष्ट्रके लिये, समाजके लिये, धर्मके लिये होना ही चाहिये।

हम बोलनेवाले नहीं, करनेवाले बनें। अपने बारेमें हम न बोलें। हमारा काम, हमारी समाजसेवाको देखकर हमारे विरोधी भी बोल उठें—वाह! गजब..., तब जीवन सार्थक होगा। ठीक है हम सूरज-चंदा नहीं बन सकते, दुनियाका अँधेरा नहीं मिटा सकते, तब क्या अपने जीवनदीपकसे सत्कर्मोंका प्रकाश करके, क्षेत्रविशेषमें सन्मार्ग दिखानेका कार्य भी नहीं कर सकते? जो भगवान्ने दिया है, उसे समाजके हितमें लगाओ, जीवन सार्थक होगा।

जब सारे सहारे जवाब दे देते हैं....

(श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट)

बात है सन् १८९९ की। अमेरिकाकी। ४७ सालका एक प्रौढ़ खड़ा था एक नदीके किनारे। मेरी-विलेसे वह लौट रहा था मिसूरी स्थित अपने फार्मपर। १०२ रिवरका पुल आया कि उसने अपनी टमटमके घोड़े रोक दिये। उतरा और नदीतटपर खड़े होकर सोचने लगा—क्या करूँ?

दस सालसे मैं सतत संघर्ष कर रहा हूँ। जी-तोड़ मेहनत कर रहा हूँ। खेती करता हूँ। पशु पालता हूँ। पर नतीजा? घाटा-ही-घाटा। नुकसान-ही-नुकसान। पासमें दमड़ी नहीं। जमीन बन्धक रख चुका हूँ। उसका ब्याजतक चुकानेका प्रबन्ध नहीं। अभी-अभी तो मेरी विलेमें बैंकर कह रहा था बन्धकको खतम करनेके लिये। इतनी गरीबी झेल रहा है हमारा पूरा परिवार, फिर भी दाने-दानेकी तबाही! सारा पुरुषार्थ समाप्त हो चुका है। सारे सहारे जवाब दे चुके हैं। ऐसी हालतमें मैं अब क्या करूँ?

घण्टों खड़ा वह सोचता रहा—पानीमें कूदकर सारी झंझट समाप्त कर देनेके प्रश्नपर! परंतु अन्तमें वह लौटकर टमटमपर आ बैठा और घर लौट आया।

कई साल बाद उसने अपने बेटेसे कहा—'डेल! तू जानता है कि मैं उस दिन नदीमें क्यों नहीं कूद गया? मुझे बचा लिया तेरी माँकी अडिग आस्थाने। वह रोज कहती थी कि 'भले ही सारे सहारे जवाब दे दें, बेसहारोंके सहारे, अनाथोंके नाथ परम प्रभु तो हमें भूले नहीं हैं। हम उन्हें प्रेम करते हैं, उनके आदेशोंका पालन करते हैं तो देर-सबेर सब कुछ ठीक होकर ही रहेगा!' और सचमुच वही हुआ!' उसके बाद उसने बड़े आनन्दसे जीवनके ४२ वर्ष काटे। १९४१ में मरा वह ८९ वर्षका होकर।

डेल कार्नेगी, प्रसिद्ध लेखक और विचारक डेल कार्नेगीने 'How to stop worrying and start living?' (चिन्तामुक्त कैसे हों और जीना कैसे प्रारम्भ करें?)—पुस्तकमें विस्तारमें बताया है कि उसके माता-पिताने चिन्ताओंपर कैसे विजय प्राप्त की।

× × ×

डेल कहता है, 'गरीबी हमारे पीछे पड़ी थी, मुसीबतें और परेशानियाँ हमें पग-पगपर त्रस्त करती थीं; परंतु मेरी माँ कभी भी चिन्तित न होती थी। वह अपनी सारी चिन्ताएँ प्रभुके चरणोंमें निवेदित कर देती थी। सोनेके पहले माँ बाइबिलके एक अध्यायका पाठ करती। प्राय: माँ या पिताजी प्रभु ईसाके इन सान्त्वनादायी शब्दोंको दुहराते—

'In my Father's house are many mansions,
I go to prepare a place for you,
That where I am, there ye may be also,'

'बहुत-से कमरे हैं, बहुत-से मकान हैं मेरे पिताके; तुम्हारे लिये मैं एक मकान ठीक करने जा रहा हूँ, ताकि मैं जहाँ रहूँ, तुम भी वहीं रह सको।'

× × ×

माँ प्राय: गाती—

'Peace, Peace, wonderful peace,
Flowing down from the Father above,
Sweep over my spirit for ever, I pray,
In fathomless billows of love.'

'शान्ति, शान्ति, आश्चर्यजनक शान्ति उस स्वर्गस्थित परमपिताकी ओरसे नीचे हमारी ओर सतत प्रवाहित होती है। वह मुझे अपनेमें ऊपरसे नीचेतक डुबा ले, सराबोर कर दे! प्रेमके अनन्त सागरकी लहरोंमें मैं सतत डुबकियाँ लगाऊँ!....'

× × ×

अमेरिकामें पैसेकी कमी नहीं। सुखके, विलासके आधुनिकतम साधन लोगोंको सहज उपलब्ध हैं। फिर भी, विपुलताके बीच भी अभावोंकी कमी नहीं है। पैसेकी दौड़ मनुष्यको रात-दिन अस्त-व्यस्त रखती है। पलभरको भी उसे शान्ति नहीं मिलती। रात-दिन परेशानी, चिन्ता, निराशा, असंतोष। सब कुछ रहते हुए भी अभाव-ही-अभाव। सबसे बड़ा अभाव है—प्रेमका, स्नेहका, सद्भावका, उदारताका और नतीजा?

हर पैंतीस मिनटपर कोई आदमी आत्महत्या कर लेता है! हर दो मिनटपर कोई आदमी पागल हो जाता है! भौतिक सुखोंकी दौड़-धूपका, मनुष्यके स्नायविक तनावका यह दुष्परिणाम हमारी आँखोंके सामने है!

× × ×

डेल कार्नेगीका कहना है कि 'जो लोग आत्महत्या कर बैठते हैं या पागल हो जाते हैं, उनमेंसे अधिकांश

बचाये जा सकते हैं—बशर्ते कि इन लोगोंको प्रार्थनासे प्राप्त होनेवाली शान्ति और सन्तोषका पता चल पाता!'

एक उदाहरण देता है वह।

एक महिला है। उसके बच्चों और नाती-पोतोंको किसी संकोचका अनुभव न हो, इसलिये उसे वह मेरी कुशमैनके कल्पित नामसे पुकारता है।

मेरी कुशमैन आप-बीती सुनाती है—

मन्दीका जमाना था। मेरे पतिकी औसत आमदनी थी १८ डालर प्रति सप्ताह। कभी-कभी उतनी भी आमदनी न होती। कारण, वह अक्सर बीमार पड़ जाता। इन कारणोंसे हमें अपना वह मकान खो देना पड़ा, जो हमने अपने हाथोंसे खड़ा किया था। परचूनीवाले साहुको हमसे ५० डालर पावना था। हमारे ५ बच्चे थे। खानेकी तंगी, पहननेकी तंगी। मैं चिन्तासे त्रस्त रहने लगी। एक दिन परचूनीवाले साहुने मेरे ११ सालके बच्चेपर यह झूठा आरोप लगाया कि उसने उसके यहाँसे दो पेंसिलें चुरायी हैं। मेरा बच्चा मुझे यह घटना सुनाते-सुनाते रो पड़ा। मैं जानती थी कि वह ईमानदार है और जरा-सी बात भी उसे बहुत लग जाती है। मैंने जान लिया कि उसका अपमान हुआ है, दूसरोंके सामने वह जलील किया गया है। यह अन्तिम घाव था, जिसने मेरी कमर तोड़ दी।

मैंने सोचा कि हमलोग कितनी मुसीबतें झेलते आये हैं। भविष्यमें हालत सुधरेगी, इसकी कोई आशा नहीं।

चिन्तासे मैं पागल-जैसी हो गयी।

मैं अपने शयनागारमें गयी। पाँच सालकी अपनी मुन्नीको मैंने अपने साथ ले लिया। कमरेकी सभी खिड़कियाँ और छेद कागज और चिथड़ोंसे बन्द कर दिये।

मुन्नीने पूछा—मम्मी, क्या कर रही हो यह?

मैंने कहा—कुछ नहीं, बेटी। ऐसा ही कुछ है।

उसके बाद मैंने कमरेमें लगा गैसका हीटर खोल दिया—पर उसे जलाया नहीं।

जैसे ही मैं मुन्नीके साथ बिस्तरपर लेटी, वह बोली—'मम्मी, कैसा मजा है। थोड़ी देरमें हमलोग उठ जायँगे!'

मैंने कहा—चिन्ता न कर बेटी! हमलोग थोड़ी-सी झपकी लेंगे।

फिर मैंने अपनी आँखें बन्द कर लीं। हीटरसे निकलनेवाली गैसकी आवाज मेरे कानोंमें पड़ने लगी। मैं कभी न भूल सकूँगी गैसकी उस महकको...!

अचानक मुझे लगा कि कहींसे संगीतकी ध्वनि आ रही है। मैं सुनने लगी। रसोईघरमें मेरा रेडियो खुला ही छूट गया था। उसीपरसे वह संगीत सुनायी पड़ रहा था। एक पुराना भजन उसपर गाया जा रहा था—

What a friend we have in Jesus,
All our sins and griefs to bear!
What a privilege to carry
Everything to God in prayer.
Oh, what peace we often forfeit,
Oh, what needless pain we bear,
All because we do not carry
Everything to God in prayer!

'प्रभु कैसे अच्छे मित्र हैं हमारे!
हमारे सारे पापों और दु:खोंको वे स्वयं झेलते हैं!
कैसी सुविधा हमें मिली हुई है
कि हम अपनी सारी बातें प्रभुचरणोंमें निवेदित कर दें!
अहा, कैसी शान्ति हम प्राय: खो बैठते हैं,
अहा, कैसे व्यर्थके कष्ट हम झेला करते हैं,
केवल इसलिये—
कि हम अपनी सारी बातें प्रभुके चरणोंमें निवेदित नहीं करते!
हम उनसे प्रार्थना नहीं करते।'

जैसे-जैसे मैं इस भजनको सुनती गयी, वैसे-वैसे मुझे लगा कि मैंने भयंकर भूल कर डाली है। अभीतक जितने भी कष्ट झेले थे, वे सब मैंने अकेले-ही-अकेले झेले थे। मैंने अपनी सारी चिन्ताएँ उन परम प्रभुके चरणोंमें निवेदित ही नहीं की थीं···!

मैं बिस्तरसे कूद पड़ी। गैसका स्विच बन्द कर दिया। दरवाजा खोल दिया, खिड़कियोंके पर्दे उठा दिये।

सारे दिन मैं रो-रोकर प्रभुसे प्रार्थना करती रही। मैं उनसे सहायताकी भीख नहीं माँगती रही—उलटे सच्चे हृदयसे उन्हें धन्यवाद देती रही कि उन्होंने कितनी नियामतें मुझे बख्श रखी हैं। उन्होंने मुझे ५ बच्चे दिये हैं—स्वस्थ, सुन्दर और हृष्ट-पुष्ट—तनसे भी, मनसे भी। मैंने प्रभुसे कहा कि अब आगे मैं कभी ऐसी कृतघ्नता नहीं करूँगी। भविष्यमें मैंने वैसा किया भी।

अपना मकान छोड़कर जब हम एक स्कूलके मकानमें ५ डालर मासिकके किरायेपर रहने गये, तब मैंने प्रभुको धन्यवाद दिया कि हमारे ऊपर छत तो है! मैंने उन्हें इसके

लिये भी धन्यवाद दिया कि परिस्थितियाँ बहुत बुरी नहीं हैं।

धीरे-धीरे स्थिति सुधरने लगी। मन्दी घटने लगी। मुझे अच्छा काम मिल गया। मेरा कॉलेजमें पढ़नेवाला बेटा एक फार्ममें गायें दुहनेका काम पा गया।

आज मेरे सभी बच्चे बड़े हो गये हैं। सब विवाहित हैं। तीन सुन्दर नाती-पोते हैं। आज मैं उस भयंकर दिनकी याद करती हूँ तो प्रभुको धन्यवाद देती हूँ कि मैं ठीक समयपर 'जाग' गयी, वरना जीवनके ये सुन्दर वर्ष मैं कहाँ पाती! आज जब मैं सुनती हूँ कि कोई आदमी अपने जीवनका अन्त करना चाहता है तो मेरे भीतरसे लगता है कि मैं चिल्लाकर उससे कहूँ—'भैया, ऐसा मत करो, मत करो!' जीवनके काले-से-काले क्षण थोड़ी ही देरके लिये आते हैं—उसके बाद ही आता है सुनहला प्रभात!

× × ×

डेल कार्नेगी मानता है और सही मानता है कि चिन्ताओंको दूर करनेका सबसे अच्छा, अत्यन्त पूर्ण उपाय है—'प्रार्थना'।

विश्वके महान्-से-महान् व्यक्ति भी जब देखते हैं कि सारे सहारे जवाब दे चुके हैं, तब वे प्रार्थनाका सहारा लेते हैं।

महात्मा गांधी तो कहा ही करते थे कि 'प्रार्थनाका सहारा न होता तो मैं कबका पागल हो गया होता!'

जनरल मांटगुमरी, जनरल वाशिंगटन, राबर्ट ली-जैसे सेनापति, डॉक्टर अलेक्सिस कैरल-जैसे विश्वविश्रुत वैज्ञानिक, इमैनुएल कैण्ट-जैसे तत्त्ववेत्ता, डॉक्टर कार्ल जुंग-जैसे मनोवैज्ञानिक—सभी इस बातपर एकमत हैं कि प्रार्थना कभी फेल नहीं होती। प्रभुपर सब कुछ छोड़ देनेसे मनुष्य निश्चिन्त हो जाता है और उसके सारे कष्टोंका अन्त हो जाता है। केवल विश्वास करनेभरकी देर है।

अनाथ कौन है यहाँ, त्रिलोकनाथ साथ हैं।
दयालु दीनबंधुके बड़े विशाल हाथ हैं॥

× × ×

मानवके उत्थानका, मानवके विकासका भी यही मार्ग है। उस परम प्रभुपर हम अपनेको छोड़ दें, बस—झंझटें खतम! विनोबाने 'गीताप्रवचन' के तेरहवें अध्यायमें इस बातको बड़े अच्छे ढंगसे समझाया है। कहा है—

जबतक देहस्थित आत्माका विचार मनमें नहीं आता, तबतक मनुष्य साधारण क्रियाओंमें ही तल्लीन रहता है। विकासका आरम्भ तो इसके बाद होता है।

इस समयतक आत्मा सिर्फ देखता रहता है। माँ जिस तरह कुएँकी ओर रेंगते जानेवाले बच्चेके पीछे सतत सतर्क खड़ी रहती है, उसी प्रकार आत्मा हमपर निगाह किये खड़ा रहता है। शान्तिके साथ वह सब क्रियाओंको देखता है। इस स्थितिको 'उपद्रष्टा' साक्षीरूपसे सब देखनेवाला कहा गया है।

इस अवस्थामें आत्मा देखता है। अभी वह सम्मति, स्वीकृति नहीं देता, परंतु यह जीव, जो अबतक अपनेको देहरूप समझकर सब क्रिया, सब व्यवहार करता है, वह आगे चलकर जागता है। उसे भान होता है कि अरे, मैं पशुकी तरह जीवन बिता रहा हूँ।

जीव जब इस तरह विचार करने लगता है, तब उसकी नैतिक भूमिका शुरू होती है। तब कदम-कदमपर वह उचित-अनुचितका विचार करता है, विवेकसे काम लेने लगता है। स्वैर क्रियाएँ रुकती हैं। तब आत्मा स्वस्थ रहकर देखता ही नहीं, भीतरसे अनुमोदन देता है—'शाबाश' 'खूब'! अब वह केवल उपद्रष्टा नहीं रहा, 'अनुमन्ता' हो गया।

कोई भूखा अतिथि दरवाजेपर आ जाय और आप अपनी परोसी थाली उसे दे दें। रातको इस सत्कृतिका स्मरण हो तो देखिये, मनको कितना आनन्द होता है। भीतरसे आत्माकी हलकी गुंजार कानोंमें होती है—'अच्छा काम किया।' माँ जब बच्चेकी पीठ ठोककर कहती है—'अच्छा किया, बेटा!' तब उसे लगता है मानो सारी दुनियाकी बख्शिश उसे मिल गयी। इसी तरह हमारे हृदयस्थ परमात्माके 'शाबाश बेटा', ये शब्द हमें प्रोत्साहन देते हैं। ऐसे समय जीव भोगमय जीवनको छोड़कर नैतिक जीवनकी भूमिकामें स्थित होता है।

इसके बादकी भूमिकामें मनुष्य अपने नैतिक जीवनमें कर्तव्य-कर्मके द्वारा अपने मनके तमाम मलोंको धोनेका यत्न करता है। पर एक समय ऐसा आता है, जब मनुष्य ऐसा काम करते-करते थकने लगता है। तब जीव ऐसी प्रार्थना करने लगता है—

'हे भगवन्! मेरे उद्योगोंकी, मेरी शक्तिकी अब हद आ गयी। मुझे अधिक बल दे।'

जबतक मनुष्यको यह अनुभव नहीं होता कि उसके तमाम प्रयत्नोंके बावजूद वह अकेला कामयाब नहीं हो सकता, तबतक प्रार्थनाका रहस्य उसकी समझमें नहीं आ सकता।

अपनी सारी शक्ति लगानेपर भी जब वह काफी नहीं

मालूम होती, तब आर्तभावसे द्रौपदीकी तरह परमात्माको पुकारना चाहिये। परमेश्वरकी कृपा और सहायताका स्रोत तो बहता ही रहता है। जिसे कमी पड़ती हो, वह सतत माँग ले।

सत्कर्म होते-होते जब चित्तके स्थूल मल धुल जाते हैं और सूक्ष्म मल धुलनेका समय आता है और उसके सारे प्रयत्न थकने लगते हैं, तब वह परमात्माको पुकारता है और वह 'आया' कहकर दौड़ आता है। जरा दरवाजा खोलिये कि सूर्यनारायण सारा-का-सारा प्रकाश लेकर अन्दर घुस आते हैं और अँधेरा दूर कर देते हैं। परमात्माकी स्थिति भी ऐसी ही समझो। उनसे माँगिये तो उन्हें बाँह फैलाकर आया ही समझो। भीमाके किनारे (पण्ढरपुरमें) कमरपर हाथ रखकर वे तैयार ही खड़े हैं—

'उठाके लो भुजा कहे, प्रभु आ जा!' ऐसा वर्णन तुकाराम आदिने किया है।

वह उपद्रष्टा, अनुमन्ता न रहते हुए 'भर्ता'—सब तरह सहायक होता है। मनकी मलिनता मिटानेके लिये आतुर होकर जब हम पुकारते हैं—

मारी नाड़ तमारे हाथे! प्रभु, संभाल जो—रे!

'तू ही एक मेरा मददगार है। तेरा आसरा मुझे दरकार है।'—ऐसी प्रार्थना हम करते हैं, तब वह दयाधन दूर कैसे रहेगा? भक्तकी सहायता करनेवाला वह भगवान्, अधूरेको पूरा करनेवाला वह प्रभु दौड़ पड़ता है। वह रैदासके चमड़े धोता है, सदन कसाईका मांस बेचता है, कबीरकी चादर बुनता है और जनाबाईके साथ चक्की पीसता है।

इसके बादकी सीढ़ी है—परमेश्वरके कृपा-प्रसादसे कर्मका जो फल मिला, उसे भी खुद न लेकर उसीके अर्पण कर देना। इस भूमिकामें जीव परमेश्वरसे कहता है—'अपना फल आप ही भोगो।' नामदेव धरना देकर बैठ गया कि 'प्रभु, दूध पीना ही पड़ेगा!' कितना मधुर प्रसंग है वह। सारा कर्मफल-रूपी दूध नामदेव भगवान्‌के अर्पण कर रहा है। इस तरह जीवनकी सारी पूँजी, सारी कमाई, जिस परमात्माकी कृपासे प्राप्त हुई, उसीको वह अर्पण कर देता है। उपद्रष्टा, अनुमन्ता, भर्ता—इन स्वरूपोंमें प्रतीत होनेवाला परमात्मा अब 'भोक्ता' हो जाता है।

इसके बाद अब संकल्प ही करना छोड़ देता है। ज्ञानदेवने कहा है—

माली जिधर ले गया, उधर चुपचाप गया,
यों पानी-जसे, भैया, होओ सदा!

माली जिन फूलों और पौधोंको चाहता है, उन्हें पानी देकर पोसता है। इसी तरह मेरे हाथों जो कुछ होना है, उसे उसीको तय करने दो। अपने सिरपर बोझ रखकर भी यदि मैं घोड़ेपर बैठूँगा तो भी बोझ घोड़ेपर ही पड़ेगा, फिर सारा ही बोझा उसकी पीठपर क्यों न लाद दूँ? इस तरह जीवनकी तमाम ही हलचल, उठा-धरी, फलना-फलाना—सब अन्तमें वह परमात्मा ही हो जाता है। मेरे जीवनका वह 'महेश्वर' ही हो जाता है।

इस तरह विकास होते-होते सारा जीवन ही परमेश्वरमय हो जाता है। सिर्फ देहका पर्दा बाकी रह जाता है। वह जब हट जाता है, तब जीव और शिव, आत्मा और परमात्मा एक ही हो जाता है। इस प्रकार—

उपद्रष्टानुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः।

—इस स्वरूपमें हमें परमात्माका उत्तरोत्तर अधिक अनुभव करना है।

प्रभु पहले तटस्थ रहकर देखता है। फिर नैतिक जीवनका आरम्भ होनेपर हमसे सत्कर्म होने लगते हैं, तब हमें शाबाशी देता है। फिर चित्तके सूक्ष्म मल धो डालनेके लिये अपने प्रयत्नोंको अपर्याप्त देखकर भक्त जब पुकारता है, तब वह अनाथ-नाथ सहायताके लिये दौड़ पड़ता है। उसके बाद फलको भी भगवान्‌के अर्पण करके उसे भोक्ता बना देना और अन्तमें तमाम संकल्प उसीके अर्पण करके सारा जीवन हरिमय कर देना है। यही मानवका अन्तिम साध्य है। कर्मयोग और भक्तियोगरूपी दोनों पंखोंसे उड़ते हुए साधकको इस अन्तिम मंजिलतक जा पहुँचना है।

× × ×

धन्य हो उठेगा हमारा जीवन, जिस क्षण हम और सारे सहारे छोड़कर उस एकमात्र सहारेका सहारा लेकर पुकारने लगेंगे—

मालिक तेरी रजा रहे औ तू-ही-तू रहे।
बाकी न मैं रहूँ, न मेरी आरजू रहे॥
जबतक कि तनमें जान, रगोंमें लहू रहे।
तेरा ही जिक्र हो और तेरी जुस्तजू रहे॥

संत-वचनामृत

(वृन्दावनके गोलोकवासी सन्त पूज्य श्रीगणेशदासजी भक्तमालीके उपदेशपरक पत्रोंसे)

❀ श्रीहनुमान्‌जीमें नवधा भक्ति है। वे यद्यपि सभी भक्तियोंके आचार्य हैं, परंतु दास्य रस, जो भक्तिका प्राण है, उसके विशेष आचार्य हैं। जहाँ-जहाँ कथा होती है, वहाँ-वहाँ उपस्थित होकर अश्रुपूरित नयन, मस्तकमें अंजलि बाँधकर श्रवण करते हैं। विश्वमें अनन्त स्थानोंपर कथा हर समय होती रहती है, अत: सर्वत्र सुनते हैं; इसलिये श्रवणके आचार्य हैं। कीर्तनमें उनके रोम-रोमसे नामकी ध्वनि निकलती रहती है। मन, वाणी और शरीरसे होनेवाले कर्मोंको करके उन्हें प्रभुको अर्पण करना चाहिये। यह कर्मकाण्डकी विधि भी है, परंतु श्रीहनुमान्‌जीका मन-वाणी-शरीर अर्पण हैं। अत: कर्म करके अर्पण नहीं करना पड़ता है। सारे कर्म प्रभुके ही निमित्त होते हैं। **दास्यं कर्मार्पणं तस्य।** जो कर्म प्रभुको समर्पित न हों, वे कर्म हनुमान्‌जीसे नहीं बनते हैं।

❀ भगवान्‌के प्रेमीजनोंके सत्संगमें जो भगवान्‌की लीला-कथाएँ सुननेको मिलती हैं, उनसे उस दुर्लभ ज्ञानकी प्राप्ति होती है, जिससे संसारके दु:ख निवृत्त हो जाते हैं। मन शान्त हो जाता है। हृदय शुद्ध होकर आनन्दका अनुभव करने लगता है। भक्तियोग प्राप्त हो जाता है। भगवान्‌की ऐसी रसमयी कथाका चस्का लग जानेपर भला कौन ऐसा है, जो कथामें प्रेम न करे। भगवान्‌के गुण ऐसे मधुर हैं कि ज्ञानी लोगोंको भी अपनी ओर खींच लेते हैं। ज्ञानी यानी आत्मज्ञानी कृष्णरूपमें मग्न होते हैं। अन्य विषयोंका ज्ञानी कृष्णकी ओर आकृष्ट नहीं हो सकता है।

❀ अयोध्याके गोकुलभवनके परमहंसजीका जीवन-चरित्र प्रकाशित हुआ है। उसमें उन्होंने लिखा है कि यात्रा करते समय मैं एक रेलवे स्टेशनपर ठहरा था। इतनेमें एक माताजी आयीं, उन्होंने श्रीरामचरितमानसका पाठ किया। कुछ भोग अर्पण करके उन्होंने ध्यान किया तो ग्रन्थसे ही राम-लक्ष्मण शिशु रूपमें प्रकट हो गये। भोग खाकर पुन: ग्रन्थमें लीन हो गये। यह दर्शन प्रत्यक्ष हुआ। किसीसे कहो तो कोई विश्वास नहीं करेगा, परंतु प्रेमकी ऐसी महिमा है कि उसके प्रभावसे भगवान् प्रकट हो जाते हैं।

❀ उपासनाकी पूर्णतामें लौकिक वासना बाधक है और उपासनासे ही लौकिक वासनाओंका अन्त होता है। जो श्रीकृष्ण नित्य निरन्तर अखण्ड हैं, उनसे कोई जीव विमुख तो हो सकता है कुछ कालके लिये, परंतु कोई श्रीकृष्णसे भिन्न नहीं हो सकता है। अत: कृष्णकी उपासनाके लिये कहीं अन्यत्र नहीं जाना है। प्रभुको अपने निकट देखना है। अनुभव करना है। अपनेको श्रीकृष्णके निकट उपस्थित करना ही उपासना है।

❀ इस संसारमें अपने ही प्रारब्धके अनुसार सुख-दु:ख प्राप्त होते हैं, परंतु भगवान्‌का अनन्य भक्त सुख-दु:खमें अपने इष्टदेवकी कृपाका अनुभव करता है। हानि-लाभमें दूसरोंको कारण मानकर उनसे राग-द्वेष नहीं करता है। जिसने आत्म-समर्पण किया है, उसे निश्चिन्त रहना चाहिये। प्रभु जैसे रखें, उसी प्रकार रहकर सर्वेश्वरको धन्यवाद देना चाहिये।

❀ दयामय प्रभु जीवोंपर कृपा करनेके लिये सर्वदा तत्पर रहते हैं। कृपा है, उसका हमको अनुभव करना चाहिये। यदि दया न होती तो आज जो सुख, सत्संग सुविधा प्राप्त है, वह न मिलती। प्रभु बुद्धिको शुद्ध बनाये रहें, यही कृपा है। प्रभुकी कृपामें विश्वास न करना ही संकट है। आवश्यकता यह है कि जैसे प्रभु रखें, उसीमें सुख और आनन्द मानना चाहिये। जो सेवक स्वामीको संकोचमें डालकर अपना काम बनाना चाहता है, वह सच्चा सेवक नहीं है। भगवत्कृपाके अधीन ही हम हैं। प्रभु बुद्धि शुद्ध करें, विश्वास दृढ़ बना रहे।

❀ शुभ, अशुभ कर्मोंका फल, प्रारब्ध अवश्य ही भोगना पड़ता है, पर यदि ज्ञान, भक्तिकी पूर्णता हो जाय तो प्रारब्ध, संचित, क्रियमाण सभी प्रकारके कर्म नष्ट हो जाते हैं। दूसरा उपाय यह है कि सुख और दु:ख दोनोंको भगवान्‌की कृपाका फल मान लिया जाय तो कृपाके क्षेत्रमें आनेवाले दु:ख-सुख नगण्य हो जाते हैं।

❀ इस बातका मनमें दृढ़ विश्वास रखना चाहिये कि प्रभु दयालु हैं। हमारे ऊपर उनकी कृपा है और आगे भी रहेगी। संसार एक-सा नहीं रहता है। इसमें बदलाव आता है, उससे हम लोगोंको घबड़ाना नहीं चाहिये। अपने किये हुए पुण्य-पापोंके फलस्वरूप सुख-दु:खोंको भोगनेमें प्रसन्न रहना चाहिये और प्रभु कृपाका अनुभव करना चाहिये। [**'परमार्थके पत्र-पुष्प'से साभार**]

महाभारत-कथाका व्यापक विस्तार

(सुश्री डॉ० मोनाबालाजी)

भारतवर्षमें महाभारत ग्रन्थको न केवल एक ऐतिहासिक ग्रन्थके रूपमें देखा जाता है, अपितु इसका महत्त्व एक आध्यात्मिक ग्रन्थके रूपमें भी मान्य है। महाभारतमें कौरवों-पाण्डवोंकी कथा मुख्य है, परंतु इसके साथ ही अवान्तर कथाओंमें भारतीय साहित्यके मूल्यवान् रत्न (ग्रन्थके बीज) छिपे हैं। महाभारतके पात्रोंमें श्रीकृष्ण भी हैं, जो भारतीय जन-मानसको आह्लादित एवं आन्दोलित करनेमें सक्षम हैं। वे महाभारतकी सम्पूर्ण कथाके केन्द्रबिन्दु हैं। युधिष्ठिर महाभारतकथाके धर्ममय विशाल वृक्ष हैं; अर्जुन स्कन्ध हैं, भीमसेन शाखा और नकुल-सहदेव इसके समृद्ध फल-पुष्प हैं। श्रीकृष्ण वेद और ब्राह्मण ही इस वृक्षके मूल (जड़) हैं—

युधिष्ठिरो धर्ममयो महाद्रुमः
स्कन्धोऽर्जुनो भीमसेनोऽस्य शाखाः।
माद्रीसुतौ पुष्पफले समृद्धे
मूलं कृष्णो ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च॥

(महा०आदि० १।१११)

भारतके ज्ञानकी विरासतका विश्वकोश महाभारत है। महाभारतके बृहत् कलेवरमें भारतीय दर्शन, धर्म, इतिहास, पुराण, स्मृति और काव्य सभीको समुचित स्थान प्राप्त हुआ है। महाभारतरूप बृहत् विश्वकोशपर तो यूरोपीय विद्वान् भी मुग्ध रहे हैं। इसमें विविध विषयोंकी व्यापकता देखकर ही किसी यूरोपीय विद्वान्ने इसे 'Epic within Epic' की संज्ञा दी है।

महाभारत ग्रन्थमें अनेक मूल्यवान् शिक्षाप्रद कथाएँ उपलब्ध हैं। इस ग्रन्थमें गीता, विष्णुसहस्रनाम, अनुगीता, भीष्मस्तवराज आदि अनेक रत्नोपम प्रकरण हैं। स्वयं कृष्णद्वैपायन व्यासने महाभारतमें ही लिखा—

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्॥

(महा०आदि० १।६२।५३)

अर्थात् हे भरतश्रेष्ठ! धर्म, अर्थ, काम और मोक्षके सम्बन्धमें जो बात इस ग्रन्थमें हैं, वह अन्यत्र भी है। जो इसमें नहीं है, वह कहीं भी नहीं है।

महाभारत अपने मूलरूपमें संस्कृत साहित्यका एक ऐसा ग्रन्थ है, जिसमें उपलब्ध कथाओंसे प्रभावित हो कालिदास, माघ, भवभूति, भारवि आदि उत्तरवर्ती कवियोंकी रचनाएँ प्रणीत हुईं।

महाभारतकी महिमामें कहा गया है कि जैसे भोजन किये बिना शरीर-निर्वाह सम्भव नहीं है, वैसे ही इस इतिहासका आश्रय लिये बिना पृथ्वीपर कोई कथा प्रतिष्ठित नहीं हो सकती। जैसे अपनी उन्नति चाहनेवाले महत्त्वाकांक्षी सेवक अपने कुलीन और सद्भावसम्मत स्वामीकी सेवा करते हैं, इसी प्रकार संसारके श्रेष्ठ कवि इस महाभारतकी सेवा अर्थात् विधिवत् अनुशीलन करके ही अपने काव्यकी रचना करते हैं—

अनाश्रित्येदमाख्यानं कथा भुवि न विद्यते।
आहारमनपाश्रित्य शरीरस्येव धारणम्॥
तदेतद् भारतं नाम कविभिस्तूपजीव्यते।
उदयप्रेप्सुभिर्भृत्यैरभिजात इवेश्वरः॥

(महा०आदि० २।३७-३८)

इस ग्रन्थमें अनेक रोचक उपाख्यान वर्णित हैं। आदिपर्वके अन्तर्गत सम्भवपर्वमें '**शकुन्तलोपाख्यान**' वर्णित है। इसमें दुष्यन्त एवं शकुन्तलाकी कथा है, इसी उपाख्यानको आधार मानकर महाकवि कालिदासने '**अभिज्ञानशाकुन्तलम्**'की रचना की, जो संस्कृत साहित्यके इतिहासमें अद्वितीय रचना मानी जाती है।

'**मत्स्योपाख्यान**' वनपर्वके अन्तर्गत मार्कण्डेयसमास्यापर्वमें आया उपाख्यान है, इसमें मत्स्यावतारकी कथा है, जिसमें प्रलयके आनेपर मनुद्वारा वेदग्रन्थोंकी रक्षाका वर्णन प्राप्त होता है। यह कथा अपनी रोचकता एवं लोकप्रियताके कारण विशिष्ट मानी गयी है। मत्स्यावतारकी कथा शतपथब्राह्मण ग्रन्थमें भी आयी है।

'**रामोपाख्यान**' वनपर्वमें वर्णित उपाख्यान है, जिसमें दशरथपुत्र श्रीरामकी कथा वर्णित है। इस

उपाख्यानको पढ़नेसे इस बातका संकेत मिलता है कि वाल्मीकिके रामायणका यह संक्षिप्त रूप है। इस उपाख्यानके कारण ही विद्वानोंद्वारा महाभारतको रामायणका उत्तरवर्ती सिद्ध किया गया। वैसे इस कथामें वाल्मीकि रामायणका बहुत अधिक अनुकरण अवश्य है, परंतु अनेक स्थलपर भिन्नता भी उपलब्ध है।

'नलोपाख्यान' महाभारतके वनपर्वमें उपलब्ध एक विशिष्ट उपाख्यान है, इसमें राजा नल एवं दमयन्तीकी मनोहारी कथा आयी है। इस कथाको आधार बनाकर श्रीहर्षद्वारा संस्कृतके उत्कृष्ट महाकाव्य **'नैषधीयचरित'** की रचना की गयी है।

'शिबि-उपाख्यान' महाभारतके वनपर्वकी शोभा बढ़ाता है। इस कथामें उशीनरनरेशके द्वारा अपने प्राण देकर बाजकी रक्षा की गयी है। यह कथा जातक कथाओंमें अपना स्थान बनाये हुए है।

'सावित्री-उपाख्यान' वनपर्वमें आया हुआ है, इस उपाख्यानमें भारतीय आदर्श नारी सावित्रीकी कथा वर्णित है। राजा द्युमत्सेनके पुत्र सत्यवान् और सावित्रीपर अवलम्बित इस कथामें पातिव्रतधर्मकी पराकाष्ठा एवं नारी आदर्शकी उच्चताका एक साथ निदर्शन उपस्थित होता है। सावित्रीद्वारा सत्यवान्‌के प्राण बचानेहेतु यमके पासतक जाना एवं पतिकी प्राणरक्षाके सहित पितृकुल और श्वशुरकुल—दोनोंहेतु वर प्राप्त करना एक बहुत ही सुन्दर कथा है।

वनपर्वमें आये कैरात पर्वमें किरातकथा है, जिसे आधार बनाकर महाकवि भारविने **'किरातार्जुनीयम्'**की रचना की। इसमें किरातवेषधारी शिव एवं अर्जुनकी कथा कही गयी है। भारविने १८ सर्गोंमें कथाको निबद्ध किया है। प्रारम्भके दो सर्गोंमें कविकी राजनीतिक पटुताके विशेष दर्शन होते हैं। चतुर्थ एवं पंचम सर्गमें प्रकृतिका सुन्दर एवं विशद वर्णन प्राप्त होता है।

मूल कथानक यद्यपि अति लघु है, परंतु भारविने इसे अपनी कविप्रतिभाके बलपर महाकाव्यके रूपमें उपस्थित किया है।

संस्कृतके महाकवि भासके द्वारा अनेक नाटकोंकी रचना की गयी, इनमेंसे छः नाटकोंका आधार महाभारत है। प्रथम रूपक **'पंचरात्र'** है, जिसमें महाभारतकी एक घटनाको आधार बनाकर कल्पित नाटककी रचना की गयी है। इसमें दुर्योधनद्वारा प्रतिज्ञा की गयी है कि पाण्डव यदि पाँच रातमें मिल जायँ तो उन्हें अपना आधा राज्य दे दूँगा। गुरु द्रोणके प्रयत्नसे पाण्डव मिल जाते हैं। दुर्योधनद्वारा उन्हें आधा राज्य दे दिया जाता है। दूसरे रूपक **'मध्यमव्यायोग'**में भीमकी कथा वर्णित है, जिसमें भीमने बकासुर नामक राक्षसका वधकर एक ब्राह्मणपुत्रकी रक्षा की। **'दूतवाक्य'** में कृष्णके दूतकर्मका वर्णन प्राप्त होता है। **'दूतघटोत्कच'** में युद्धमें अभिमन्युके निधनके बाद श्रीकृष्ण घटोत्कचको दूत बनाकर धृतराष्ट्र और दुर्योधनके पास भेजते हैं, जो दशा पुत्रमृत्युके बाद पाण्डवोंकी हुई है, वैसी ही तुम्हारी होगी, इसी इतिवृत्तपर कथाकी उद्भावना की गयी है। **'कर्णभार'**में ब्राह्मणरूप धारण किये इन्द्र कर्णसे कवच-कुण्डल माँगने आये हैं, इसीपर कथाका निर्माण हुआ है। **'ऊरुभंग'**में भीमद्वारा दुर्योधनके ऊरुको तोड़नेवाली प्रसिद्ध कथाको आधार बनाकर नाटककी रचना की गयी है। इस प्रकार महाकवि भासद्वारा रचित तेरह नाटकोंमें छः महाभारतीय कथापर आश्रित हैं।

महाकवि भट्टनारायणद्वारा **'वेणीसंहार'** नाटक प्रणीत है, जिसमें द्रौपदीके द्वारा अपनी वेणीको दुर्योधनकी मृत्युके पश्चात् ही सँहारने (गूथने)-की प्रतिज्ञावाली कथाका विस्तरण उपलब्ध है। महाकवि भट्टनारायणने छः अंकोंमें पूरी कथाको निबद्ध किया है, इसका अंगी रस वीर है। वेणीसंहारमें मूल कथामें कई परिवर्तन दृष्टिगत होते हैं। कविने आवश्यकतानुसार अनेक संशोधन, परिवर्धन तथा परिवर्तन किये हैं। द्वितीय अंककी कथा मौलिक है, महाभारतमें [दुर्योधनकी पत्नी] भानुमतीका नाम नहीं है। षष्ठ अंकमें राक्षसद्वारा भीमकी मृत्युका झूठा समाचार सुनकर युधिष्ठिर और द्रौपदीके चितारोहणकी तैयारीका वर्णन महाभारतमें नहीं

उपलब्ध है। कविकी मौलिक कल्पनाने नाटकमें इस प्रकारका विषय-परिवर्धन किया है।

क्षेमीश्वरके द्वारा प्रणीत **नैषधानन्द**की रचनाका आधार महाभारत ग्रन्थ ही रहा, जिसमें नलोपाख्यानकी कथा सात अंकोंमें वर्णित की गयी है। यह रूपक अपनी प्रसादमयी शैलीके लिये प्रसिद्ध है।

त्रिविक्रमभट्टके द्वारा प्रणीत काव्य **नलचम्पू** एक प्रसिद्ध चम्पू है, जिसमें राजा नल एवं दमयन्तीके प्रणयका सुरम्य वर्णन प्रस्तुत किया गया है। यह चम्पू सात उच्छ्वासोंमें विभक्त है। नलचम्पू महाभारतके वनपर्वके नलोपाख्यानसे प्रेरित है। इस चम्पूको श्रेष्ठ कोटिका माना जाता है। त्रिविक्रमभट्टकी कृति नलचम्पू चम्पूसाहित्यका सर्वप्राचीन उपलब्ध ग्रन्थ है। इस काव्यके प्रत्येक उच्छ्वासके अन्तिम श्लोकमें 'हरचरणसरोज' शब्दका प्रयोग मिलता है। नलचम्पूका कथानक अपूर्ण अवस्थामें है, जिसका कि प्रसिद्धिप्राप्त एक अलौकिक घटनाके अतिरिक्त कोई स्पष्ट कारण समझमें नहीं आता। इस चम्पूकी विशेषता सभंगश्लेषका प्रयोग है। श्लेषोंका चमत्कार नितान्त श्लाघनीय है।

क्षेमेन्द्रके द्वारा '**भारतमंजरी**'में महाभारतका संक्षेप प्रस्तुत किया गया है। यह संक्षेप इतनी कुशलता एवं विवेकसे किया गया है कि मूल ग्रन्थका आस्वाद अक्षुण्ण रहता है। हरिवंशसहित उन्नीस पर्वोंमें कुल १०,७९२ पद्योंद्वारा सम्पूर्ण महाभारतीय कथानक संक्षेपमें प्रस्तुत किया गया है।

कांचनपण्डितद्वारा '**धनंजयविजय व्यायोग**'की रचना की गयी, यह अर्जुनके सम्बन्धपर आधारित है।

माघके द्वारा '**शिशुपालवध**' प्रणीत है, यह महाभारतके सभापर्वपर आधारित है। महाकविद्वारा बीस सर्गोंमें राजसूययज्ञमें श्रीकृष्णके द्वारा शिशुपालका वध वर्णित है। यद्यपि कथानक बहुत छोटा है, लेकिन महाकविने इसे १३५० श्लोकोंद्वारा वर्णित किया है। निश्चित रूपसे माघ एक अद्वितीय कवि हैं।' इस महाकाव्यमें श्रेष्ठ कवित्वका निदर्शन व्याप्त है।

कुलशेखरवर्मन्‌के द्वारा प्रणीत '**सुभद्रा-धनंजय**'का आधार भी महाभारत ही है, जिसमें सुभद्रा और अर्जुनकी परिणय-कथाका वर्णन प्राप्त होता है।

नीतिवर्मन्‌ने '**कीचकवध**'की रचना की है, जिसका आधार महाभारतका विराटपर्व है। महाभारतमें पाण्डवोंको वनवासमें एक वर्षका काल अज्ञातवासके रूपमें बिताना था, इसलिये पाण्डव विराटनगरमें छद्मरूपमें उपस्थित हुए। विराटके सेनापति कीचककी द्रौपदीपर दूषित दृष्टि थी, इस कारण भीमसेनके द्वारा उसका वध किया गया।

राजशेखरने '**बालभारत**' नाटककी रचना की है। यह नाटक केवल दो अंकोंमें ही प्राप्त है, जिसमें द्रौपदी स्वयम्वर, द्यूतक्रीडा और द्रौपदीके चीरहरणके अनन्तर पाण्डवोंके वनगमनतककी ही कथाको निबद्ध किया गया है।

वत्सराजने '**किरातार्जुनीय व्यायोग**'की रचना की है, जिसका आधार महाभारतका वनपर्व है, जिसमें किरातवेषधारी शिव और अर्जुनके युद्धका वर्णन है। यह कृति एक लोकप्रिय व्यायोगकी कोटिमें आती है।

कृष्णानन्दके द्वारा **सहृदयानन्दमें** नल-दमयन्तीकी कथा कही गयी है। यह महाकाव्य १५ सर्गोंमें विभक्त है। इसमें भाषाकी सरलताका विशेष ध्यान रखा गया है।

अगस्त्यके द्वारा '**बालभारत**'की रचना की गयी है। जिसका आधार भी महाभारत ग्रन्थ है।

रामचन्द्रने '**नलविलास**' एवं '**निर्भयभीम**'की रचना की। इन दोनोंका आधार महाभारत ग्रन्थ रहा है। निर्भयभीम एक व्यायोग है, इसमें एक ही अंक है।

प्रह्लाददेवने '**पार्थपराक्रम**' नामक व्यायोगकी रचना की है। यह एक प्रसिद्ध व्यायोग है, जिसमें अर्जुनके द्वारा विराटकी गायोंके उद्धारकी कथा है, जो महाभारतके विराटपर्वपर आधारित है।

मोक्षादित्यके द्वारा '**भीमपराक्रम**' नामक व्यायोगकी रचना की गयी है, जिसका आधार ग्रन्थ भी महाभारत ही है।

आनन्दभट्टकी '**भारतचम्पू**'का भी आधार महाभारत

है। इस ग्रन्थमें बारह स्तबकोंमें महाभारतकी संक्षिप्त कथा वर्णित है। इसमें १००० पद्य तथा लगभग इतने ही गद्य खण्ड हैं। इस चम्पूमें अभिव्यक्तिकी सजीवताका निदर्शन होता है। इस चम्पूमें भीम-कीचक युद्ध एवं कुरुक्षेत्रमें उपस्थित सेनाओंका ओजस्वी वर्णन एक विशेष प्रभाव उत्पन्न करता है।

चक्रपाणिका **'द्रौपदीपरिणयचम्पू'** महाभारतके आदिपर्वके कथानकपर आधृत है। इसमें पाण्डवोंके एकचक्रा नगरीमें निवाससे लेकर इन्द्रप्रस्थमें युधिष्ठिरद्वारा राज्यस्थापनातककी कथाका वर्णन उपलब्ध होता है।

विश्वनाथ कविराजने १४वीं शताब्दीमें **'सौगन्धिकाहरण'** एकांकीकी रचना की। इसमें पाण्डवोंके अज्ञातवासमें भीमसे याचित सौगन्धिकापुष्पमंजरीका कुबेरद्वारा पाण्डवोंको उपहारस्वरूप देनेका वर्णन है, यह कथा महाभारतके वनपर्वमें उल्लिखित है।

रामदेव व्यासद्वारा **'पाण्डवाभ्युदय'** तथा शंकर-लालके **'सावित्रीचरित'** नामक छायानाटकके बीज भी महाभारत ग्रन्थमें ही उपलब्ध हैं। वर्तमान समयमें वाई महालिंग शास्त्रीके **'कलिप्रादुर्भाव'** नाटकमें महाभारतीय आधारपर कलियुगका मानव-जीवनपर प्रभाव बड़े सुन्दर ढंगसे प्रदर्शित किया गया है।

महाभारतके उपाख्यानोंपर तो साहित्यका विशाल भवन खड़ा है ही, इस ग्रन्थमें उपलब्ध **'भगवद्गीता'** लोकमानसकी उत्कट श्रद्धाका विषय रही है। गीतापर बहुत सारी टीकाएँ इसकी लोकप्रियताका परिचय देती हैं। गीतामें भगवान् श्रीकृष्णके द्वारा कर्मको विशेष बताते हुए अनेक धर्म, दर्शन आदिसे संगत तथ्योंका निरूपण है।

गीतामें कर्मयोग, ज्ञानयोग तथा भक्तियोग तीनों मार्गोंसे ईश्वरसे एकत्वको बताया गया है। गीताकी भाषा जितनी सरल है, उसके भाव उतने ही गम्भीर। मानवके मनमें उठनेवाली तीव्र जिज्ञासाओंका समाधान गीता प्रदान करती है। गीतामें जीवनदर्शन है।

महाभारतमें वर्णित **'विष्णुसहस्त्रनाम'** भी भारतीय जनमानसके बीच विशिष्ट स्थान रखता है। इसमें भीष्मके द्वारा भगवान् विष्णुकी सहस्त्र नामोंसे स्तुति की गयी है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतवर्षके संख्यातीत प्रबन्धग्रन्थोंके उपजीव्य इस महाभारतका हर देश-कालमें महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है और समय-समयपर इसपर आधारित रचनाएँ होती रही हैं। इन रचनाओंने निश्चय ही इस महाकाव्यकी महिमा बढ़ायी है। महाभारतने संस्कृत साहित्यकी निधिमें तो वृद्धि की ही, हिन्दी, उड़िया, तमिल, पंजाबी आदि भाषाके साहित्यको भी प्रचुर मात्रामें समृद्ध किया है। वास्तवमें अनेक साहित्यिक रचनाओंकी उपजीव्यताके लिये भारतीय साहित्य इस ग्रन्थका ऋणी रहेगा।

गोग्रास-दानका अनन्त फल

योऽग्रं भक्तं किञ्चिदप्राश्य दद्याद् गोभ्यो नित्यं गोव्रती सत्यवादी।
शान्तोऽलुब्धो गोसहस्त्रस्य पुण्यं संवत्सरेणाप्नुयात् सत्यशीलः॥
यदेकभक्तमश्नीयाद् दद्यादेकं गवां च यत्। दशवर्षाण्यनन्तानि गोव्रती गोऽनुकम्पकः॥

(महाभारत, अनुशासनपर्व ७३। ३०-३१)

जो गोसेवाका व्रत लेकर प्रतिदिन भोजनसे पहले गौओंको गोग्रास अर्पण करता है तथा शान्त एवं निर्लोभ होकर सदा सत्यका पालन करता रहता है, वह सत्यशील पुरुष प्रतिवर्ष एक सहस्त्र गोदान करनेके पुण्यका भागी होता है। जो गोसेवाका व्रत लेनेवाला पुरुष गौओंपर दया करता और प्रतिदिन एक समय भोजन करके एक समयका अपना भोजन गौओंको दे देता है, इस प्रकार दस वर्षोंतक गोसेवामें तत्पर रहनेवाले पुरुषको अनन्त सुख प्राप्त होते हैं।

भगवती श्रीवाराही देवी

(श्रीपरिपूर्णानन्दजी वर्मा)

भगवान् विष्णुके दशावतारोंमें वराहावतारकी स्वरूपभूता महाशक्ति ही भगवती वाराही हैं। इन्हें भगवती वार्त्ताली भी कहा जाता है। इनके अनेकानेक प्राचीन मन्दिर प्राप्त होते हैं। वाराणसीके पक्के मोहालमें, गंगातटपर स्थिति मन्दिर (मानमन्दिर-घाटके उत्तरमें म०नं० डी० १६/८४)-के तहखानेमें भगवती वाराहीकी दिव्य, भव्य मूर्तिका दर्शन करते नेत्र तृप्त नहीं होते। वास्तवमें यह बड़ा प्राचीन तथा सिद्ध स्थान रहा है, जिसकी सम्पूर्ण भूमिसे एक विचित्र ज्योत्स्ना प्रस्फुटित होती रहती है।

वाराही बड़ी प्रचण्ड तथा उग्र देवता हैं। देवी-परिवारमें देवी-सेनाकी ये सेनापति हैं। अतएव इन्हें दिन-रात अवकाश नहीं है। इनके पूजनका समय प्रातः चार बजेसे छः बजे तकका ही है। इनका बीज-मन्त्र है—**'ऐं ग्लौं।'** इनके बारह नामोंका नित्य श्रद्धापूर्वक पाठ करनेसे संसारमें बड़ा-से-बड़ा संकट नष्ट हो जाता है। वे बारह नाम इस प्रकार हैं—पंचमी, दण्डनाथा, संकेता, समयेश्वरी, समय-संकेता, वाराही, क्षेत्रिणी, शिवा, वार्त्ताली, महासेना, स्वाज्ञाचक्रेश्वरी तथा अरिघ्नी। मुने! ये बारह नाम बताये गये हैं। द्वादश नाममय इस वज्रपंजरके मध्य में रहनेवाला मनुष्य कभी संकटमें पड़नेपर दुःख नहीं पाता है।* वाराहीके ये बारह नाम बहुत कम लोगोंको ज्ञात हैं। इनके पाठसे बड़ा लाभ होता है।

वाराही—पृथ्वीदेवी

भगवान् विष्णुके तीसरे अवतारका नाम वाराह है। वाराहभगवान्ने प्रलयकालमें हिरण्याक्ष असुरको मारकर रसातलसे पृथ्वीका उद्धार किया था। यज्ञ वाराहकी अर्द्धांगिनी ये वाराही देवी ही पृथ्वी हैं। भागवत आदि पुराणोंके अनुसार वाराही तथा पृथ्वी, दोनों पर्यायवाची शब्द हैं। इन शब्दोंकी वाच्यार्थस्वरूपा एक ही महादेवी हैं। वाराही अथवा पृथ्वीदेवी ही सर्वाधारा तथा सर्वबीजस्वरूपा हैं। संसारकी सम्पूर्ण शक्ति इनके हाथोंमें है। इनकी उपासनासे समस्त सांसारिक इच्छाओंकी पूर्ति हो सकती है। इनका वर्ण शुक्ल है, ये श्वेत वस्त्र धारण किये हुए हैं। जड़ी-बूटियोंका स्वामी चन्द्रमा है, अतएव चन्द्रमाके समान इनका श्वेत वस्त्र है। श्वेत स्वच्छ वस्त्र निर्मल धर्मका भी द्योतक है। संसारके सब वैभवोंका प्रतीक कमल इनके हाथोंमें शोभित है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण (३।६१।४)-में आता है—

सर्वौषधियुता देवी शुक्लवर्णा ततः स्मृता।
धर्मवस्त्रं सितं तस्याः पद्मं चैव तथा करे॥

विष्णुधर्मोत्तरपुराण (३।६१।१—३)-के अनुसार भगवती वाराही चतुर्भुजा हैं। इनके एक हाथमें रत्नपात्र है और दूसरेमें अन्नपात्र। तीसरे हाथमें ओषधिपात्र है तथा चौथे हाथमें कमल है। इनकी कान्ति शुक्ल है और ये रत्नजटित अलंकारोंसे विभूषित हैं। लिखा है—

शुक्लवर्णा मही कार्या दिव्याभरणभूषिता।
चतुर्भुजा सौम्यवपुश्चन्द्रांशुसदृशाम्बरा॥
रत्नपात्रं शस्यपात्रं पात्रमौषधिसंयुतम्।
पद्मं करे च कर्त्तव्यं भुवो यादवनन्दन॥

आराधनाका क्रम

वाराही अर्थात् पृथ्वीदेवीको यह अत्यन्त अप्रिय है कि दीपक, कर्पूर, पूजाका पुष्प, देव-मूर्ति, शिवलिंग, शालग्राम-शिला तथा उसका जल, जपकी माला, रत्न, सुवर्ण, शंख, मुक्ता, रत्न, माणिक्य तथा यज्ञोपवीत आदिको नग्न भूमिपर बिना आसन बिछाये रखा जाय। अक्षतका ही आसन क्यों न हो, उसका रहना अत्यन्त आवश्यक है। उक्त वस्तुओंको आसन-रहित भूमिपर रखना बड़ा भारी पाप है। इस प्रकार रखी गयी पूजन-सामग्रीका कोई फल नहीं होता। गोरोचना, चन्दन, तुलसीदल, पुस्तक आदिको भी भूमिपर नहीं रखना चाहिये। भगवती वाराहीने वाराह

---

* पञ्चमी दण्डनाथा च संकेता समयेश्वरी। तथा समयसंकेता वाराही क्षेत्रिणी शिवा॥
वार्त्ताली च महासेना स्वाज्ञाचक्रेश्वरी तथा। अरिहनी चेति सम्प्रोक्तं नामद्वादशकं मुने॥
नामद्वादशधाभिख्यवज्रपञ्जरमध्यगः। संकटे दुखमाप्नोति न कदाचित्तु मानवः॥

भगवान्‌से कहा है कि 'मैं आपकी आज्ञासे सबका भार वहन कर सकती हूँ, पर ऊपर लिखी वस्तुओंका (जो भूमिपर रखी गयी हों) नहीं।' भगवान्‌ने स्वीकार किया कि 'जो लोग इस प्रकार अर्चन, अर्पण करते हैं, वे सौ दिव्य वर्षोंतक नरक भोगेंगे।'*

वाराही-पूजन

वाराही देवीका सर्वप्रथम पूजन भगवान् वाराहने किया। ब्रह्मवैवर्तपुराणके अनुसार देवपूजिता वाराही पृथ्वीकी अधिष्ठात्री देवी हैं।

क्षित्यधिष्ठात्री देवी सा वाराही पूजिता सुरैः।

वाराहके बाद ब्रह्माने, फिर राजा पृथुने और अन्तमें मनुओंने इनका पूजन किया। भगवान् विष्णुने इनका मन्त्रसहित पूजन किया। वह मन्त्र यह है—

'ॐ ह्रीं श्रीं वसुधायै स्वाहा'

इस मन्त्रके जप, ध्यान तथा स्तवनसे सम्पूर्ण मनः-कामना सिद्ध होती है। इनके निग्रहाष्टक, अनुग्रहाष्टक प्रसिद्ध एवं प्रभावी हैं। भगवतीका एक स्तवन इस प्रकार है—

यज्ञशूकरजाया त्वं जयं देहि जयावहे।
जयेऽजये जयाधारे जयशीले जयप्रदे॥
सर्वाधारे सर्वबीजे सर्वशक्तिसमन्विते।
सर्वकामप्रदे देवि सर्वेष्टं देहि मे भवे॥
सर्वशस्यालये सर्वशस्याढ्ये सर्वशस्यदे।
सर्वशस्यहरे काले सर्वशस्यात्मिके भवे॥
मङ्गले मङ्गलाधारे मङ्गल्ये मङ्गलप्रदे।
मङ्गलार्थे मङ्गलेशे मङ्गलं देहि मे भवे॥
भूमे भूमिपसर्वस्वे भूमिपालपरायणे।
भूमिपाहंकाररूपे भूमिं देहि च भूमिदे॥

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, प्रकृतिखण्ड, अध्याय ८)

भगवान् विष्णु बोले—विजयकी प्राप्ति करानेवाली वसुधे! मुझे विजय दो। तुम भगवान् यज्ञवराहकी पत्नी हो। जये! तुम्हारी कभी पराजय नहीं होती है। तुम विजयका आधार, विजयशील और विजयदायिनी हो। देवि! तुम्हीं सबकी आधारभूमि हो। सर्वबीजस्वरूपिणी तथा सम्पूर्ण शक्तियोंसे सम्पन्न हो। समस्त कामनाओंको देनेवाली देवि! तुम इस संसार में मुझे सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तु प्रदान करो। तुम सब प्रकारके शस्योंका घर हो। सब तरहके शस्योंसे सम्पन्न हो। सभी शस्योंको देनेवाली हो तथा समय-विशेषमें समस्त शस्योंका अपहरण भी कर लेती हो। इस संसारमें तुम सर्वशस्यस्वरूपिणी हो। मंगलमयी देवि! तुम मंगलका आधार हो। मंगलके योग्य हो। मंगलदायिनी हो। मंगलमय पदार्थ तुम्हारे स्वरूप हैं। मंगलेश्वरि! तुम जगत्‌में मुझे मंगल प्रदान करो। भूमे! तुम भूमिपालोंका सर्वस्व हो, भूमिपालोंकी परम आश्रयभूता हो तथा भूपालोंके अहंकारका मूर्त्तरूप हो। भूमिदायिनी देवि! मुझे भूमि दो।

ध्यानके बाद स्तवन और स्तवनके बाद फलश्रुतिका पाठ आवश्यक है। फलश्रुति (१८।९) इस प्रकार है—

इदं स्तोत्रं महापुण्यं तां सम्पूज्य च यः पठेत्।
कोट्यन्तरे जन्मनि स सम्भवेद् भूमिपेश्वरः॥
भूमिदानकृतं पुण्यं लभेत पठनाज्जनः।
भूमिदानहरात् पापान्मुच्यते नात्र संशयः॥
भूमौ वीर्यत्यागपापाद् भूमौ दीपादिस्थापनात्।
पापेन मुच्यते प्राज्ञः स्तोत्रस्य पठनान्मुने॥
अश्वमेधशतं पुण्यं लभते नात्र संशयः॥

यह स्तोत्र परम पुण्यमय है। जो पुरुष पृथ्वीका पूजन करके इसका पाठ करता है, उसे कोटि-कोटि जन्मोंतक भूपाल-सम्राट् होनेका सौभाग्य प्राप्त होता है। इस स्तोत्रके पाठसे मनुष्य भूमिदानके पुण्यका भागी होता है और भूमिदानके अपहरणसे होनेवाले पापसे छुटकारा पा जाता है, इसमें संशय नहीं है। मुने! इस स्तोत्रके पाठ से विद्वान् पुरुष भूमिपर वीर्यत्याग करने और भूतलपर दीप आदि रखनेके पापसे मुक्त हो जाता है। उसे सौ अश्वमेध यज्ञोंका पुण्य प्राप्त होता है, इसमें कोई संदेह नहीं।

आजके संकट-कालीन युगमें वाराही अर्थात् भगवती वसुधाका पूजन नितान्त आवश्यक तथा वाञ्छनीय है।

---

* भगवतीने कहा— वहामि सर्वं वाराहरूपेणाहं तवाज्ञया। लीलामात्रेण भगवन् विश्वं च सचराचरम्॥
मुक्तां शुक्तिं हरेरर्चां शिवलिङ्गं शिलां तथा। शंखं प्रदीपं रत्नं च माणिक्यं हीरकं मणिम्॥
गोरोचनां चन्दनं च शालग्रामजलं तथा। एतान् वोढुमशक्ताऽहं क्लिष्टा च भगवञ्शृणु॥
श्रीभगवान्‌ने कहा— द्रव्याण्येतानि ये मूढा अर्पयिष्यन्ति सुन्दरि। ते यास्यन्ति कालसूत्रं दिव्यं वर्षशतं त्वयि॥ (देवीभा० ९।९।३८-३९, ४१-४२)

भक्त-गाथा—

एक सन्त, जिनकी कृपासे डाकू भक्त बन गया

(डॉ० श्रीमती ज्ञानवती अवस्थी)

एक सद्गृहस्थ सन्त इलाहाबाद समीपवर्ती गोसाईंपुर ग्राममें निवास करते थे। वे पढ़े-लिखे अधिक नहीं थे, किंतु उन्होंने 'ढाई आखर प्रेमका' पढ़ा था। वे रामचरित-मानसके रसिक भावुक कथाकार थे तथा आशुकवि भी थे। माघ मेलेमें प्रतिवर्ष ज्योतिष्पीठाधीश्वर श्रीशंकराचार्यके मंचसे उनकी माहभर कथा होती थी। वर्षभर प्रेमी भक्तोंके यहाँ उनकी कथाएँ होती रहती थीं। वे नि:स्पृह सन्त थे। कभी किसीसे कुछ याचना नहीं करते थे। मंचपर उनकी कथाको सुनकर श्रोता भावविभोर हो जाते थे।

वे श्रीरघुवंशमणि श्रीरामजीको अपना सखा मानते थे। भावजगत्में श्रीरामजीके साथ उनकी अनेक लीलाएँ होती थीं। अपने सखाके साथ खाते थे, सोते थे, घूमने जाते थे, घंटों वार्तालाप करते थे, कभी रूठ जाते थे, कभी उन्हें मनाते थे। प्रात:काल दातौन करने कुएँके पास जाते तो बैठे रह जाते, शाम हो जाती, परिवारवाले ढूँढ़ने निकलते तो रोते-सिसकते मिलते, खाना-पीना सब भूल जाता। उनकी इस भाव-दशाको सब नहीं समझ सकते—***'भगवत रसिक रसिककी बातें रसिक बिना कोउ समुझि सकै ना।'*** कोई रसिक सन्त या प्रेमीभक्त मिल जाते तो रातभर ऐसी कथा-वार्ता चल पड़ती कि सबेरा हो जाता। दोनों श्रोता एवं वक्ता अपने भान को भूल जाते। कभी रात्रिमें एकान्तमें जाकर अपने सखा रामजीको पुकारते, रोते एवं विह्वल हो जाते। संत कबीर ने कहा—

हँस हँस कंत न पाइए जिन पाया तिन रोय।
जो हाँसे ही हरि मिलें तो काहे दुहागिनि कोय॥

इन सन्तका नाम था—पं० सूर्यप्रकाश मिश्र रामायणी 'आशुकवि'। गोसाईंपुरके आसपासके हिन्दू-मुसलमान सभी इनसे बहुत प्रेम करते थे तथा आदरपूर्वक 'साधु बाबा' कहकर सम्बोधित करते थे। संयमी बहुत थे। वर्षोंतक नमकका त्याग कर दिया था तथा अन्नका भी त्यागकर बहुत अल्प फलाहार लेकर रहते थे। जब अन्न लेते थे, तब भी स्वपाकी थे। इनका जीवन तो दिव्य था, किंतु मृत्यु भी दिव्य थी। सन् २००४ में ज्येष्ठ शुक्ल पंचमीको परमपूज्य गुरुदेव स्वामी श्रीरामहर्षणदासजी महाराजके आश्रम श्रीरामहर्षणकुंज नयाघाट अयोध्याधाममें पू० गुरुदेवका जन्ममहोत्सव चल रहा था। हजारों भक्त, वैष्णव सन्त उपस्थित थे। प्रात:काल छह बजे पू० गुरुदेवके सान्निध्यमें कीर्तन चल रहा था, उसी समय सन्त सूर्यप्रकाशजी चौरासी वर्षकी अवस्थामें एक क्षणमें महाप्रयाण कर गये। इनकी भक्ति एवं गुरुनिष्ठा प्रशंसनीय एवं वन्दनीय थी। गुरुदेवने कहा—'सूर्यप्रकाशजी चौरासीसे मुक्त हो गये।' ***'अवध तजे तनु नहिं संसारा।'*** पू० गुरुदेव स्वामी रामहर्षणदासजी स्वयं पारसमणि थे। उनके चरणोंमें सच्चे मनसे जो पहुँचा, वह भी पारसमणि बन गया। पं० सूर्यप्रकाशजी ऐसे ही पारसमणि थे। इनके सम्पर्कमें जो भी आया, वह रसिक रामभक्त बन गया। अनेक कुमार्गियोंके जीवनको बदलते मैंने स्वयं देखा। सन्मार्गपर चलकर, तिलक लगाकर, माला-झोली टाँगकर उन्हें नामजप करते देखा है।

सन् १९६२ की घटना है, मैंने स्वयं सन्त सूर्यप्रकाशजीके मुखसे सुनी थी। रात्रिका समय था। परिवारके सब लोग सो रहे थे, किंतु सखा रामजीके विरहीको नींद कहाँ! वे घरसे कुछ दूर एकान्तमें बैठे प्रिय सखाकी स्मृतिमें जाग रहे थे—

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।

(गीता)

जागैं जोगी-जंगम, जती जमाती ध्यान धरैं।

(कवितावली)

सन्त कबीर कहते हैं—

कै विरहिनि कूँ मीचु दै कै आपा दिखराय।
आठ पहरका दाँझणा मोपे सह्या न जाय॥

यही स्थिति सखारामके विरहीकी थी। वे पुकार रहे थे। वे अपनी सुध-बुध भूले थे-***'गदगदगिरा नयन बह नीरा।'***

हे प्राणवल्लभ सुहृद सखा, हे श्यामसुन्दर राम हे!
हे अखिल सुख सौन्दर्य सागर, हे नयन अभिराम हे!
हे ताप मोचन, जलज लोचन, रस प्रदाता आइये।
मृदु मंद स्मित की छटा से, हृदय ताप मिटाइये।

इसी समय काले वस्त्र पहने, मुखको काले कपड़ेसे छिपाये बन्दूक लिये दस-बारहकी संख्यामें

डाकुओंका समूह आ धमका। उस समय डाकुओंका आतंक अधिक था। किसीका अच्छा व्यापार चला कि डाका पड़ा। गाँवमें किसीका अच्छा घर बना या किसीको सम्पत्ति प्राप्त हुई कि डाकू निर्दयतासे डरा-धमकाकर या मारकर सब कुछ लूट ले जाते थे। सन्त सूर्यप्रकाशजीका घर गाँवमें पक्का दो-मंजिला बना था। डाकुओंको शिकार मिल गया। रामविरही भक्तकी छातीमें बन्दूक अड़ाकर कहा—घरकी, तिजोरीकी चाबी मुझे तुरन्त दो, जान बचाना हो तो परिवारको घरसे बाहर निकाल दो। एक शब्द भी मत बोलना। शोर किया तो किसीकी जान नहीं बचेगी। डाकू अपने अन्दाजमें बोल रहा था। यहाँ सन्तको तो सबमें रामजी दीख रहे थे—

'निज प्रभु मय देखहिं जगत केहि सन करहिं विरोध।'

सूर्यप्रकाशजी तो सामान्यरूपसे भी घट-घटमें, कण-कणमें अपने प्रभुको देखते थे—

सीय राम मय सब जग जानी । करऊँ प्रनाम जोरि जुग पानी॥

सन्तको डाकूमें अपने रामजी दिखायी दिये। वे सरदार डाकूके पैरसे लिपटकर रुदन करते हुए कहने लगे—'हे मेरे सखा रामजी! मैं कबसे आपको पुकार रहा था। आपके लिये व्याकुल हो रहा था। मुझे मालूम था कि आप इस दीनकी पुकारपर द्रवित होकर अवश्य आयेंगे। धन्य हैं आप। आपकी लीला आप ही जानें। भुवनमोहन श्यामसुन्दर धनुर्धारीका रूप त्यागकर बन्दूकधारीके इस विकराल रूपको आपने मुझे डरानेके लिये धारण किया है। मैंने ऐसा भयंकर रूप आजतक नहीं देखा फिर भी मैं पहचान तो गया हूँ, अब आप अपने सौम्य रूपमें दर्शन देनेकी कृपा करें।'

डाकू इनके भावको भला कैसे समझ सकता था। उसने कहा—व्यर्थकी बकवास मैं नहीं सुनना चाहता। अपनी सब सम्पत्ति मेरे हवाले कर दो। सन्त बोले—'हे सरकार! मैं तो अकिंचन दास हूँ, मेरा कुछ भी नहीं, सब कुछ घर, द्वार, सम्पत्ति, परिवार आपका ही है। मेरे नाथ! मैं देनेवाला कौन हूँ? आपका सब कुछ है। आप सहर्ष ले लीजिये। हाँ, एक प्रार्थना अवश्य है कि मैंने जो अमूल्य सम्पत्ति अर्जित की है, पहले उसे अपने हाथोंसे आपको अर्पित करना चाहता हूँ। आशा है, इस गरीबके धनको आप अवश्य स्वीकार करेंगे। इसके बाद यह सब कुछ आपका है, जो मर्जी हो, ले लीजिये।'

ऐसा लगा सन्तके हृदयकी सच्ची वाणी सुनकर डाकू कुछ विमोहित-सा खड़ा रह गया।

सूर्यप्रकाशजी बोले—'प्रभो! आप कबतक खड़े रहेंगे? कृपया कुछ क्षण विराज जाइये।' उन्होंने एक खाट डालकर उसपर दरी बिछा दी। सरदार डाकू उसपर बैठ गया। पण्डितजीने एक रामचरितमानसका गुटका और तुलसीकी माला डाकूको सौंपकर कहा—यही मेरे जीवनकी अमूल्य सम्पत्ति है, इसे स्वीकार करें और चरण-वन्दनकर कहा—थोड़ा-सा इस दीनका आतिथ्य स्वीकार कर लेते तो मैं धन्य हो जाता। घरमें गायका दूध कड़ाहीमें गरम हो रहा था, वे एक गिलासमें भरकर लाये और डाकूको दे दिया। डाकूने कोई संदेह नहीं किया। पूर्ण विश्वासके साथ दूध पीकर कहा—आज मैं धन्य हो गया। अब मुझे कुछ नहीं चाहिये। अपने डाकू साथियोंसे कहा—'अब इस गाँवमें हम लोगोंको किसीको तंग नहीं करना है, चुपचाप यहाँसे निकल चलो।'

सरदार डाकूने रामचरितमानस और तुलसी मालाको बहुत श्रद्धासे सिरपर लगाकर कहा—'आज मुझे सब कुछ मिल गया।' सन्त सूर्यप्रकाशजीके चरणोंमें सिर रखा। डाकूकी आँखोंसे झरझर बहते प्रेमाश्रु उनके चरणोंका प्रक्षालन कर रहे थे। भक्तप्रवर पण्डितजी ने उसे हृदयसे लगाकर विदा किया।

लगभग एक माहके पश्चात् पं० सूर्यप्रकाशजीके पास एक पोस्टकार्ड आया—उसमें लिखा था— 'आप साक्षात् भगवान् राम हैं। अहोभाग्य मेरा, मुझे आपका दर्शन मिला। आपके सत्संगसे मेरा जीवन बदल चुका है। मैंने प्रतिज्ञा करके सभी निन्दनीय कर्म त्याग दिये हैं। आपके द्वारा प्रदान की हुई माला और रामायण मेरे जीवनके सम्बल हैं। मैं शीघ्र ही आपका दर्शनलाभ प्राप्त करूँगा, किंतु पूर्णतः बदले रूपमें।'

—आपका एक भटका हुआ दास...
(हस्ताक्षर नहीं थे)

गोस्वामीजीने लिखा—सत्संगका आश्चर्यजनक प्रभाव होता है—

मज्जन फल पेखिअ ततकाला। काक होहिं पिक बकउ मराला॥

तथा

सठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परस कुधातु सुहाई॥

साधनोपयोगी पत्र

(१)

भगवान्‌के लिये व्याकुलताका अभाव

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका कृपापत्र मिला, धन्यवाद। आप स्कूल जाते समय भगवान्‌का नाम जपते चलते हैं, ध्यानकी भी चेष्टा करते हैं और जो कोई भी मिल जाय, उसे भगवत्स्वरूप मानकर मन-ही-मन प्रणाम भी किया करते हैं या करना चाहते हैं, यह बड़ी उत्तम बात है। प्रत्येक नामके साथ उसकी संख्या भी याद रखते हैं, किंतु इन सभी बातोंकी ओर दृष्टि रखनेमें आपको बड़ी कठिनाईका अनुभव होता है, यह सब कार्य एक साथ चले और कठिनाई भी न हो, इसका क्या उपाय है?—यही आपके प्रश्नका सारांश है।

अभ्यास न होनेसे आरम्भमें ऐसी कठिनाई हो सकती है। अभ्यास होनेपर ऐसा स्वभाव बन जाता है। फिर कोई कठिनाई नहीं होती है। आप दो कोस जाते हैं, इतनी दूरीमें केवल सौ या पचास बार ही भगवान्‌का नाम ले पाते हैं, वह बहुत कम है। इसका कारण यही हो सकता है कि भगवान् और उनके नामोंका महत्त्व पूरा समझमें नहीं आया है, तभी उसमें रुचि नहीं हो पायी है। रुचि होनेपर तो उतनी देरमें हजारों बार भगवन्नामका उच्चारण किया जा सकता है। आपने पत्रमें आगे जो बातें लिखी हैं, वे ठीक ही हैं; सचमुच ही हमलोग भगवान्‌की कोई आवश्यकता नहीं समझते। उनके बिना कोई काम रुका नहीं दिखायी देता। यह विपरीत दृष्टि हमारे ही पूर्व-पापोंका फल है। जो इस जगत्‌को बनाते और बिगाड़ते हैं, जिनके बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता, जिनकी शक्तिसे ही जगच्चक्रका संचालन हो रहा है, वे ही भगवान् अनावश्यक हो गये हैं। उनके बिना कोई काम रुकता नहीं दिखायी देता—यह अज्ञानकी पराकाष्ठा है!

इसका दूर होना भगवान्‌की अहैतुकी कृपापर ही निर्भर है। वे ही दया करके जब हमारे अज्ञानको हर लें, और अपने ज्ञानकी दिव्य ज्योति हमारे अन्तःकरणमें आलोकित कर दें, तभी हम उनकी महिमा समझ सकते हैं। फिर तो उनके लिये कुछ भी करनेमें न आलस्य होगा और न कठिनाईका अनुभव। आप प्रत्येक मनुष्य आदि प्राणीको भगवान् समझनेका यत्न करते हैं और उसमें कठिनाई होती है! क्यों? इसीलिये न कि आपके मनमें ऐसा विश्वास बना हुआ है कि ये भगवत्स्वरूप नहीं हैं। आमको इमली समझनेमें, मिट्टीको सोना माननेमें जो कठिनाई होती है, उसी तरहकी कुछ कठिनाई हमलोगोंको सर्वत्र और सबमें ईश्वर-भाव बनाये रखनेमें हुआ करती है।

आपने चीनीके बने हुए खिलौने देखे होंगे, उनमें घोड़ा, सवार, हाथी, पीलवान, मनुष्य, पशु, पक्षी, फल, मूल सभी तरहकी आकृतिवाले खिलौने होते हैं। वे हैं तो सब-के-सब चीनी, सबमें एक ही स्वाद है, फिर भी नाम, रूप और आकृतिमें भेद है। इसी प्रकार सम्पूर्ण जगत् जिस परमात्मासे प्रकट हुआ है। वे ही इसके उपादान-कारण भी हैं। वे ही अनेक नाम-रूपोंमें दिखायी देते हैं। जैसे चीनीके बने हुए खिलौनोंमें चीनी ही सत्य है, नाम-रूप कल्पित हैं। उसी प्रकार परमात्मासे उत्पन्न हुए जगत्‌में परमात्मभाव ही सत्य है, जगद्‌भाव या नाम-रूप कल्पित हैं। इस बातको अच्छी तरह समझ लेनेपर एक-एक व्यक्तिको भगवान् माननेका अभ्यास नहीं करना पड़ेगा। जैसे आप अपनेको मनुष्य समझनेके लिये माला नहीं फेरते, इसी प्रकार सबको परमात्मरूप समझनेके लिये कोई कठिन अभ्यासकी आवश्यकता नहीं है। इस तत्त्वको एक बार समझ लेना है। फिर तो सब कुछ भगवान् है ही—**'वासुदेवः सर्वम्।'**

मनुष्य धनके लिये रोता है, स्त्री और पुत्रके लिये रोता है, सगे-सम्बन्धियोंके लिये रोता है, किंतु भगवान्‌के लिये उसकी आँखोंसे आँसू नहीं निकलते। उनका महत्त्व इन गयी-बीती वस्तुओंसे भी कम मान रखा गया है। धन आता है और नष्ट हो जाता है। स्वामी, स्त्री, पुत्र, सगे-सम्बन्धी सब नाशवान् हैं; सबको एक दिन इस जगत्‌से

नाता तोड़कर चल देना है। और तो और, अपना यह शरीर भी, जिसका मोह हमें सबसे अधिक रहता है, हमें छोड़कर चल देता है या हमीं इसे विवश होकर छोड़ देते हैं। जब शरीर भी सदा साथ देनेवाला नहीं, तो जगत्‌के अन्य नश्वर पदार्थों, सम्बन्धों और व्यक्तियोंके लिये क्यों रोया-धोया जाय? भगवान् नित्य हैं, अजर-अमर हैं, सौन्दर्य, माधुर्य ऐश्वर्य, सुख, आनन्द और ज्ञानके भण्डार हैं। हम जिन-जिन सुखोंकी कामनाके लिये, जिस शान्ति और सुविधाके लिये बाहर भटकते हैं, वे सभी भगवान्‌में अक्षयरूपसे, नित्य और पूर्णरूपसे विराजमान हैं। वे ही भगवान् हमारे आत्मा हैं, प्राणोंके प्राण हैं, परम प्रियतम हैं, किंतु उनके लिये हमारे मनमें कभी दर्द नहीं उठता। हमारी दशा उन पागलोंकी-सी है, जो अपने सच्चे सुहृदोंको ही पराया समझते हैं, और परायोंको अपना मानते हैं।

भगवान्‌की मोहिनी वंशी बज रही है, वे हमारा नाम ले-लेकर पुकारते हैं—'**मामेकं शरणं व्रज।**' पर हम नहीं सुनते । जहाँ हमें सब कुछ छोड़कर प्राणाधारसे मिलनेके लिए उत्सुक होकर दौड़ पड़ना चाहिये, न जाने कबके, कितने युगोंके बिछुड़े हुए प्राणेशको हृदयसे लगानेके लिये व्याकुल हो जाना चाहिये और उनके चरणोंमें जाकर लौट जाना चाहिये, वहीं हम उनकी पुकारतक नहीं सुनते। उधरसे मुँह मोड़कर विपरीत दिशाकी ओर भागे जा रहे हैं। आनन्द और तृप्तिके एकमात्र भण्डार परमात्मारूपी जलाशयसे, सुधासागरसे दूर हटकर मरुकी मरीचिकामें प्यास बुझानेको दौड़ रहे हैं। फिर हमें वहाँ केवल जलन, केवल दुःख और केवल नैराश्य ही हाथ लगे तो क्या आश्चर्य है!

यदि भगवान् हमें कर्मोंका पूरा-पूरा फल भुगताने लगें तो ***'नहिं निस्तार कलप सत कोरी'***—करोड़ों कल्पोंतक उद्धार न हो; किंतु वे तो ***'दीनबंधु अति मृदुल सुभाऊ'*** हैं; जनका अवगुण नहीं देखते। उनकी जीवोंपर अकारण करुणा है; अतएव ***'कबहुँक करि करुना नर देही'*** कभी दया करके ही वे हमें मानव शरीर, भारतवर्षमें जन्म और सनातन धर्मकी सेवाका शुभ अवसर प्रदान करते हैं। उनकी इस अपार दयाको भुलाकर यह मानना कि यह सब केवल हमें अपने अच्छे कर्मोंके प्रभावसे मिल गया है, इसमें भगवान्‌का हाथ नहीं है, मिथ्या अहंकारका परिचय देना है।

विश्वास नहीं है, परंतु सत्य यह है कि विश्वम्भर ही विश्वका भरण-पोषण करते हैं। वे भक्तोंका ही नहीं, प्राणिमात्रका योग-क्षेम वहन कर रहे हैं। भक्त केवल उन्हींपर निर्भर रहता है, अतः उसको इस बातका प्रत्यक्ष अनुभव होता है। अभक्त सदा अपने अहंकारको ही सामने रखता है। क्या हम अपने परिश्रमसे ही कमाते-खाते हैं? परिश्रमके लिये जिसने शरीर दिया, साधन दिया, नीरोग रखा, नौकरी लगवायी और छिपे-छिपे न जाने और कितने उपकार किये, उस भगवान्‌का कोई स्थान नहीं है? हा दुर्भाग्य! तू मनुष्यका पीछा कब छोड़ेगा? कब उसे पद-पदपर भगवान्‌की कृपाका अनुभव करनेकी सुबुद्धि होगी।

'केवल भगवान् ही सबके सच्चे सुहृद् हैं'—ऐसा दृढ़ विश्वास रखकर उनसे प्रेम बढ़ाते रहें, तभी कल्याण है। शेष प्रभुकी कृपा।

(२)

घरमें रहकर भजन कीजिये

प्रिय महोदय! सादर हरिस्मरण। आपका कृपापत्र मिला। आप भगवत्साक्षात्कारके लिये क्या त्याग करना चाहते हैं—यह आपने नहीं लिखा। यदि आप सच्चे संतोंका संग करेंगे और भगवद्‌भजन करना चाहेंगे तो आपका कोई विरोध नहीं करेगा। आरम्भमें कुछ विरोध हो सकता है; किंतु फिर सब शान्त हो जायँगे।

परंतु कई बार देखा गया है कि भजन और सत्संगके नामपर कोई-कोई नवयुवक क्षणिक आवेशमें आकर व्यर्थ अपने घरवालोंको तंग करते हैं, ऐसा नहीं होना चाहिये। यदि भजनकी सच्ची लगन है तो उसे दबाने की जरूरत नहीं है। भजन करते हुए घरवालोंकी यथेष्ट सेवा कीजिये। उनके प्रति भी आपका कर्तव्य है तथा उनकी सेवा भी श्रीभगवान्‌की ही सेवा है। ऐसे भावसे जो भजन एवं सेवा करते हैं, वे अपना और घरवालोंका, दोनोंका कल्याण कर सकते हैं। शेष भगवत्कृपा।

व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७६, शक १९४१, सन् २०२०, सूर्य दक्षिणायन-उत्तरायण, हेमन्त-शिशिर ऋतु, माघ कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा रात्रिमें ११। ४४ बजेतक	शनि	पुनर्वसु दिनमें २। २८ बजेतक	११ जनवरी	**कर्कराशि** दिनमें ८। ३६ बजेसे, **उ०षा० का सूर्य** रात्रिमें २। १२ बजेसे।
द्वितीया ,, १०। ३ बजेतक	रवि	पुष्य ,, १। ३६ बजेतक	१२ ,,	**मूल** दिनमें १। ३६ बजेसे।
तृतीया ,, ८। ७ बजेतक	सोम	आश्लेषा ,, १२। २४ बजेतक	१३ ,,	**भद्रा** दिनमें ९। ५ बजेसे रात्रिमें ८। ७ बजेतक, **सिंहराशि** दिनमें १२। २४ बजेसे, **संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय** रात्रिमें ८। १४ बजे।
चतुर्थी ,, ५। ५७ बजेतक	मंगल	मघा ,, १०। ५९ बजेतक	१४ ,,	**मूल** दिनमें १०। ५९ बजेतक।
पंचमी दिनमें ३। ३८ बजेतक	बुध	पू० फा०,, ९। २२ बजेतक	१५ ,,	**कन्याराशि** दिनमें २। ५८ बजेसे, **मकरसंक्रान्ति** दिनमें ८। २४ बजे, **खिचड़ी, शिशिर ऋतु** प्रारम्भ, **उत्तरायण** प्रारम्भ, **खरमास** समाप्त।
षष्ठी ,, १। १६ बजेतक	गुरु	उ० फा० प्रात: ७। ४२ बजेतक	१६ ,,	**भद्रा** दिनमें १। १६ बजेसे रात्रिमें १२। ७ बजेतक।
सप्तमी ,, १०। ५६ बजेतक	शुक्र	चित्रा रात्रिमें ४। २८ बजेतक	१७ ,,	**तुलाराशि** सायं ५। १५ बजेसे, **श्रीरामानन्दाचार्य-जयन्ती**।
अष्टमी ,, ८। ४३ बजेतक	शनि	स्वाती ,, ३। ४ बजेतक	१८ ,,	× × × ×
दशमी रात्रिमें ४। ५३ बजेतक	रवि	विशाखा ,, १। ५४ बजेतक	१९ ,,	**भद्रा** सायं ५। ४६ बजेसे रात्रिमें ४। ५३ बजेतक, **वृश्चिकराशि** रात्रिमें ८। ११ बजेसे।
एकादशी ,, ३। २६ बजेतक	सोम	अनुराधा ,, १। ६ बजेतक	२० ,,	**षटतिला एकादशीव्रत** (स्मार्त्त), **सायन कुंभका सूर्य रात्रिमें** २। ५५ बजे, **मूल** रात्रिमें १। ६ बजेसे।
द्वादशी ,, २। २२ बजेतक	मंगल	ज्येष्ठा ,, १२। ३७ बजेतक	२१ ,,	**धनुराशि** रात्रिमें १२। ३७ बजेसे, **एकादशीव्रत** (वैष्णव)।
त्रयोदशी ,, १। ४७ बजेतक	बुध	मूल ,, १२। ३६ बजेतक	२२ ,,	**भद्रा** रात्रिमें १। ४७ बजेसे, **प्रदोषव्रत, मूल** रात्रिमें १२। ३६ बजेतक।
चतुर्दशी ,, १। ४० बजेतक	गुरु	पू०षा० १। ३ बजेतक	२३ ,,	**भद्रा** दिनमें १। ४३ बजेतक।
अमावस्या ,, २। ६ बजेतक	शुक्र	उ०षा० २। २ बजेतक	२४ ,,	**मकरराशि** प्रात: ७। १८ बजेसे, **मौनी अमावस्या, श्रवणका सूर्य** रात्रिमें ३। ११ बजे।

सं० २०७६, शक १९४१, सन् २०२०, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, माघ शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा रात्रिमें ३। ४ बजेतक	शनि	श्रवण रात्रिमें ३। ४४ बजेतक	२५ जनवरी	× × × ×
द्वितीया ,, ४। २७ बजेतक	रवि	धनिष्ठा रात्रिशेष ५। २६ बजेतक	२६ ,,	**कुम्भराशि** सायं ४। ३० बजेसे, **पंचकारम्भ** सायं ४। ३० बजे, **भारतीय गणतंत्र-दिवस**।
तृतीया रात्रिशेष ६। १५ बजेतक	सोम	शतभिषा अहोरात्र	२७ ,,	× × × ×
चतुर्थी अहोरात्र	मंगल	शतभिषा प्रात: ७। ४२ बजेतक	२८ ,,	**भद्रा** रात्रिमें ७। १६ बजेसे, **मीनराशि** रात्रिमें ३। ३६ बजेसे, **वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत**।
चतुर्थी दिनमें ८। १८ बजेतक	बुध	पू०भा० दिनमें १०। १४ बजेतक	२९ ,,	**भद्रा** दिनमें ८। १८ बजेतक।
पंचमी ,, १०। २८ बजेतक	गुरु	उ०भा० ,, १२। ५१ बजेतक	३० ,,	**वसन्तपंचमी, मूल** दिनमें १२। ५१ बजेसे।
षष्ठी ,, १२। ३४ बजेतक	शुक्र	रेवती ,, ३। २३ बजेतक	३१ ,,	**मेषराशि** दिनमें ३। २३ बजेसे, **पंचक** समाप्त दिनमें ३। २३ बजे।
सप्तमी ,, २। २६ बजेतक	शनि	अश्विनी सायं ५। ४२ बजेतक	१ फरवरी	**भद्रा** दिनमें २। २६ बजेसे रात्रिशेष ५। ३८ बजेतक, **मूल** सायं ५। ४२ बजेतक, **अचलासप्तमी, रथसप्तमी**।
अष्टमी ,, ३। ५७ बजेतक	रवि	भरणी रात्रिमें ७। ३९ बजेतक	२ ,,	**वृषराशि** सायं ५। १ बजेसे।
नवमी सायं ५। १ बजेतक	सोम	कृत्तिका ,, ९। १० बजेतक	३ ,,	× × × ×
दशमी ,, ५। ३५ बजेतक	मंगल	रोहिणी ,, १०। ११ बजेतक	४ ,,	**भद्रा** रात्रिशेष ५। ३६ बजेसे।
एकादशी ,, ५। ३६ बजेतक	बुध	मृगशिरा ,, १०। ४१ बजेतक	५ ,,	**भद्रा** सायं ५। ३६ बजेतक, **मिथुनराशि** दिनमें १०। २६ बजेसे, **जया एकादशीव्रत** (सबका)।
द्वादशी ,, ५। ९ बजेतक	गुरु	आर्द्रा ,, १०। ४४ बजेतक	६ ,,	**प्रदोषव्रत, धनिष्ठामें सूर्य** रात्रिशेष ५। ३३ बजे।
त्रयोदशी ४। १२ बजेतक	शुक्र	पुनर्वसु ,, १०। १७ बजेतक	७ ,,	**कर्कराशि** सायं ४। २४ बजेसे।
चतुर्दशी दिनमें २। ५१ बजेतक	शनि	पुष्य ,, ९। ३० बजेतक	८ ,,	**भद्रा** दिनमें २। ५१ बजेसे रात्रिमें २। ० बजेतक, **व्रत-पूर्णिमा**।
पूर्णिमा दिनमें १। ८ बजेतक	रवि	आश्लेषा ,, ८। २२ बजेतक	९ ,,	**सिंहराशि** रात्रिमें ८। २३ बजेसे, **माघी पूर्णिमा, मूल** रात्रिमें ९। ३० बजेसे।

व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७६, शक १९४१, सन् २०२०, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, फाल्गुन कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा दिनमें ११।८ बजेतक	सोम	मघा रात्रिमें ६।५९ बजेतक	१० फरवरी	**मूल** रात्रिमें ६।५९ बजेतक।
द्वितीया ,, ८।५७ बजेतक	मंगल	पू०फा० सायं ५।२६ बजेतक	११ ,,	**भद्रा** रात्रिमें ७।४८ बजेसे, **कन्याराशि** रात्रिमें ११।१ बजेसे।
तृतीया प्रातः ६।३७ बजेतक	बुध	उ०फा० दिनमें ३।४६ बजेतक	१२ ,,	**भद्रा** प्रातः ६।३७ बजेतक, **संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय** रात्रिमें ९।१३ बजे।
पंचमी रात्रिमें १।५४ बजेतक	गुरु	हस्त दिनमें २।५ बजेतक	१३ ,,	**तुलाराशि** रात्रिमें १।१७ बजेसे, **कुंभ-संक्रान्ति** रात्रिमें ७।८ बजे।
षष्ठी ,, ११।४१ बजेतक	शुक्र	चित्रा ,, १२।३० बजेतक	१४ ,,	**भद्रा** रात्रिमें ११।४१ बजेसे।
सप्तमी ,, ९।४० बजेतक	शनि	स्वाती ,, ११।४ बजेतक	१५ ,,	**भद्रा** दिनमें ११।४१ बजेतक, **वृश्चिकराशि** रात्रिमें ४।९ बजेसे।
अष्टमी ,, ७।५३ बजेतक	रवि	विशाखा ,, ९।५० बजेतक	१६ ,,	**श्रीजानकी-जयन्ती।**
नवमी ,, ६।२७ बजेतक	सोम	अनुराधा ,, ८।५६ बजेतक	१७ ,,	**भद्रा** रात्रिशेष ५।५६ बजेसे, **मूल** दिनमें ८।५६ बजेसे।
दशमी सायं ५।२५ बजेतक	मंगल	ज्येष्ठा ,, ८।२३ बजेतक	१८ ,,	**भद्रा** सायं ५।२५ बजेतक, **धनुराशि** दिनमें ८।२३ बजेसे।
एकादशी सायं ४।५० बजेतक	बुध	मूल ,, ८।१५ बजेतक	१९ ,,	**विजया एकादशीव्रत** (सबका), **मूल** दिनमें ८।१५ बजेतक।
द्वादशी ,, ४।४५ बजेतक	गुरु	पू०षा० ,, ८।३७ बजेतक	२० ,,	**मकरराशि** दिनमें २।५० बजेसे, **प्रदोषव्रत, शतभिषाका सूर्य** दिनमें ९।१० बजे।
त्रयोदशी ,, ५।१२ बजेतक	शुक्र	उ०षा० ,, ९।२८ बजेतक	२१ ,,	**भद्रा** सायं ५।१२ बजेसे रात्रिशेष ५।४१ बजेतक, **महाशिवरात्रिव्रत।**
चतुर्दशी रात्रिमें ६।९ बजेतक	शनि	श्रवण दिनमें १०।५० बजेतक	२२ ,,	**कुम्भराशि** रात्रिमें ११।४६ बजेसे, **पंचकारम्भ** रात्रिमें ११।४६ बजे।
अमावस्या ,, ७।३४ बजेतक	रवि	धनिष्ठा ,, १२।३९ बजेतक	२३ ,,	**अमावस्या।**

सं० २०७६, शक १९४१, सन् २०२०, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, फाल्गुन शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा रात्रिमें ९।२२ बजेतक	सोम	शतभिषा दिनमें २।५३ बजेतक	२४ फरवरी	× × × ×
द्वितीया ,, ११।२४ बजेतक	मंगल	पू०भा० सायं ५।२१ बजेतक	२५ ,,	**मीनराशि** दिनमें १०।४४ बजेसे।
तृतीया ,, १।३३ बजेतक	बुध	उ०भा० रात्रिमें ७।५८ बजेतक	२६ ,,	**मूल** रात्रिमें ७।५८ बजेसे।
चतुर्थी ,, ३।३९ बजेतक	गुरु	रेवती ,, १०।३३ बजेतक	२७ ,,	**भद्रा** दिनमें २। ३६ बजे रात्रिमें ३। ३९ बजेतक, **मेषराशि** रात्रिमें १०।३३ बजेसे, **पंचक** समाप्त रात्रिमें १०।३३ बजे, **वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत।**
पंचमी रात्रिशेष ५।२७ बजेतक	शुक्र	अश्वनी ,, १२।५५ बजेतक	२८ ,,	**मूल** रात्रिमें १२।५५ बजेतक।
षष्ठी अहोरात्र	शनि	भरणी ,, २।५८ बजेतक	२९ ,,	× × × ×
षष्ठी प्रातः ६।५४ बजेतक	रवि	कृत्तिका ,, ४।३४ बजेतक	१ मार्च	**वृषराशि** दिनमें ९।२२ बजेसे।
सप्तमी ,, ७।५५ बजेतक	सोम	रोहिणी रात्रिशेष ५।४४ बजेतक	२ ,,	**भद्रा** प्रातः ७।५५ बजेसे रात्रिमें ८।११ बजेतक, **होलाष्टकारम्भ।**
अष्टमी दिनमें ८।२६ बजेतक	मंगल	मृगशिरा अहोरात्र	३ ,,	**मिथुनराशि** रात्रिमें ६।४ बजेसे।
नवमी ,, ८।२४ बजेतक	बुध	मृगशिरा प्रातः ६।२५ बजेतक	४ ,,	**पूर्वभाद्रपद में सूर्य** दिनमें २।४३ बजे।
दशमी प्रातः ७।५१ बजेतक	गुरु	आर्द्रा प्रातः ६।२९ बजेतक	५ ,,	**भद्रा** रात्रिमें ७।२१ बजेसे, **कर्कराशि** रात्रिमें १२।२४ बजेसे, **आमलकी एकादशीव्रत (स्मार्त्त)।**
एकादशी ,, ६।५१ बजेतक	शुक्र	पुष्य रात्रिशेष ५।२७ बजेतक	६ ,,	**भद्रा** प्रातः ६।५१ बजेतक, **एकादशीव्रत** (वैष्णव), **मूल** रात्रिशेष ५।२७ बजेसे।
त्रयोदशी रात्रिमें ३।४३ बजेतक	शनि	अश्लेषा रात्रिमें ४।२४ बजेतक	७ ,,	**सिंहराशि** रात्रिमें ४।२४ बजेसे, **शनिप्रदोषव्रत।**
चतुर्दशी ,, १।४१ बजेतक	रवि	मघा ,, ३।४ बजेतक	८ ,,	**भद्रा** रात्रिमें १।४१ बजेसे, **मूल** रात्रिमें ३।४ बजेतक।
पूर्णिमा ,, ११।२७ बजेतक	सोम	पू०फा० ,, १।३२ बजेतक	९ ,,	**भद्रा** दिनमें १२।३३ बजेतक, **पूर्णिमा, होलिकादाह।**

कृपानुभूति

पारमेश्वरी शक्ति

मेरे मित्र श्रीहिंगोरानी कराचीमें इंजीनियर थे। बहुत वर्षोंके पश्चात् एक बार शिमलामें संन्यासीरूपमें एक व्यक्तिको देखकर मुझे लगा कि कहीं यह हिंगोरानी तो नहीं हैं। कुछ क्षण ध्यानसे देखनेपर हम दोनोंने एक-दूसरेको पहचान लिया। संन्यासकी कहानी पूछनेपर उन्होंने जो बताया, वह प्रकृतिके नैतिक उद्देश्यका ज्वलन्त प्रमाण है। विभाजनसे पूर्व कराचीसे बम्बईके लिये एक बहुत तेज गाड़ी चलती थी, जिसे कराची-बम्बई मेल कहते थे। एक बार वे उसमें यात्रा कर रहे थे। प्रथम श्रेणीके डिब्बेमें उनके साथ एक धनी सेठ अपनी पत्नी एवं नन्हे बच्चेके साथ बैठा था। गाड़ी जब पूरे वेगमें थी और आगे ५०-६० मीलतक कोई स्टेशन नहीं था। अचानक डिब्बेके शौचालयवाले प्रकोष्ठसे एक लम्बे-चौड़े शरीरका पठान निकला, जिसने पिस्तौल लटका रखी थी और दोनों हाथोंमें छुरे ले रखे थे। उसने तुरंत सेठकी पत्नीको छुरा दिखाकर गहनोंका बक्सा छीनकर गाड़ीकी खिड़कीसे बाहर पटक दिया। दूसरे क्षण सेठानीकी गोदसे दुधमुँहा बच्चा छीनकर उसके गलेकी सोनेकी कण्ठीके लोभमें उसे भी खिड़कीसे बाहर पटक दिया। तीसरे क्षण वह स्वयं उछलकर तेज दौड़ती गाड़ीसे छलाँग लगाकर निकल गया। यह तीनों कार्य तीन क्षणोंमें इतनी जल्दीमें हुए कि इसके पहले कि श्रीहिंगोरानी गाड़ीकी जंजीर खींचकर उसे रोक सकें, पठान उछलकर भाग भी गया। जंजीर खींचनेपर भी गाड़ी रुकते-रुकते कई मील आगे निकल चुकी थी। सेठ-सेठानी मानसिक आघातसे बेहोश पड़े थे। बीच-बीचमें होश आनेपर सेठानी भयंकर चीत्कार करती थी। गाड़ी पीछे ले जानेपर सबसे प्रथम वह स्थल आया, जहाँ पठान छलाँग लगाकर चलती गाड़ीसे कूदा था। किंतु वहाँ प्रकृतिका अद्भुत विधान देखा गया। पठान छलाँग लगाते ही सामने एक सिगनलके खम्भेसे टकराकर चूर-चूर हो खूनसे लथपथ मृत पड़ा था। थोड़ा और पीछे जानेपर आभूषणका बक्सा मिला, जो पिचक तो गया था, किंतु टूटा नहीं था। गाड़ीको बार-बार आगे-पीछे ले जानेपर भी बच्चेका अता-पता नहीं मिला। माताकी चीत्कार, पिताके आघात और अन्य यात्रियोंकी चिन्तासे उस काल-रात्रिमें जंगलका दृश्य और भी भयावना बन रहा था। अन्तमें अब सबने मान लिया कि जंगलमें बच्चेको कोई पशु उठाकर ले गया होगा और अब विवशतावशात् गाड़ीको आगे बढ़ाना ही होगा। तभी गाड़ी चलनेसे पूर्व हिंगोरानी रेलवे लाइनके एक ओर लघुशंका करनेके लिये बैठे। उन्हें यह अनुभव हुआ कि निकटमें कुछ दूरीपर कोई जीव साँस ले रहा है। उन्होंने गाड़ीसे टार्च निकालकर उस दिशामें बीस-पचीस कदम जानेपर एक अद्भुत चमत्कारिक दृश्य देखा। माँने बच्चेको एक छोटा-सा लँगोट लगा रखा था, जिसको ऊपर एक सेफ्टीपिनसे टाँक दिया था। बच्चेके उस लँगोटका पिन बाहर फेंकनेपर रेलवे लाइनके पासवाली एक झाड़ीके काँटेमें अटक गया था, जिससे वह लँगोटी एक झूलेकी तरह बन गयी थी और झूलेमें झूलता हुआ बालक अपना अँगूठा चूस रहा था। उस नन्हे दुधमुँहे शिशुको एक साधारण खरोंचतक भी नहीं लगी थी। उस शिशुके इस बालमुकुन्दरूपमें दर्शनकर हिंगोरानीकी जीवनधारा ही बदल गयी। उन्होंने निश्चय किया कि जिस परमेश्वरकी परमेश्वरी शक्ति सृष्टिके कण-कणपर शासन कर रही है, मैं उसीकी खोजके लिये यह जीवन उत्सर्ग कर दूँगा। प्रकृतिके नैतिक उद्देश्यका परिचय जीवनके पग-पगपर मिलता है और संसारके इतिहासमें ऐसे अनन्त उदाहरण हैं तथा महापुरुषोंका जीवन इसका अकाट्य साक्ष्य है—**डॉ० श्रीहरवंशलालजी ओबराय**

[प्रेषक—स्वामी श्रीसंवित् सुबोधजी गिरि]

पढ़ो, समझो और करो

(१)

प्रभु-कृपा एवं श्रीमद्भगवतगीताका प्रभाव

सन् १९९४ ई० की बात है। हम लोग भिवानी (हरियाणा)-में रहते थे। मेरे पतिदेव कालेजमें प्रिन्सिपल थे एवं मैं एक प्राइवेट विद्यालयमें शिक्षिका थी। घरका काम मैं स्वयं करती थी, साथ ही 'नमः शिवाय' मन्त्रका जप भी किया करती थी। एक दिन मेरी बड़ी पुत्री प्रीति अचानक ससुरालसे आयी, वह काफी अस्वस्थ लग रही थी। उसे शहरके एक बड़े हॉस्पिटलमें भर्ती करवाया गया, जहाँ उसकी सारी जाँच हुई, कई डॉक्टर इलाज कर रहे थे। रातको मैं बिटियाके पास रहती थी तथा सुबह घर आकर सारा काम-काज करके पुनः हॉस्पिटल चली जाती थी। एक दिन सुबह-सुबह मैं हॉस्पिटलसे आकर नित्यकर्मसे निवृत्त होकर बर्तन साफ कर रही थी, साथ ही 'नमः शिवाय' का मन-ही-मन जप भी कर रही थी। उस समय मैं घरमें अकेली थी। थोड़ी देरमें दरवाजेपर घण्टी बजी, मैंने जाकर देखा तो एक योगी दरवाजेपर खड़ा था। बड़ा ही दिव्य रूप था, जो जोगीवाले शिव-मंदिरमें शिवजीका रूप होता है, ठीक मुझे ऐसा ही प्रतीत हो रहा था। मैंने पूछा—'हाँ बाबाजी! क्या चाहिये।' उन्होंने कहा—'कुछ खानेको मिलेगा?' मैंने कहा—'हाँ, ठहरिये।' मैं अन्दर गयी, मैंने हाथ धोये तथा फ्रिजमें-से सेब निकालकर लाकरके बाबाजीको दे दिये। उन्होंने कहा—'बहन! तुम चिन्ता मत करो, तुम्हारे सारे कष्ट दूर हो जायँगे।' ऐसा कहकर बाबाजी चले गये, मैं अन्दर आयी। फिर उसी क्षण वापस बाहर आकर गलीमें चारों ओर देखा, परंतु मुझे वे बाबाजी कहीं नहीं दिखे। मुझे ऐसा लगता है कि वे स्वयं भगवान् भोलेनाथ ही थे। जो आश्वस्त करने आये थे।

दो दिन बाद बिटियाको अस्पतालसे छुट्टी दे दी गयी। सभी टेस्ट नॉर्मल आये थे। फिर भी वह अस्वस्थ थी। बेडपर सोयी रहती थी तथा बड़बड़ाती रहती थी कि उनके पास कपड़ोंके अनेक बक्से भरे हुए हैं, परंतु मेरे लिये उनके पास एक भी कपड़ा नहीं है। मैं यह सुनकर हैरान थी कि वह ऐसा बार-बार क्यों कह रही है। मैं ३-४ दिन बाद स्कूल गयी तथा अपनी एक सहेलीसे सारी बात बतायी। उसने कहा—'बहनजी! मेरे एक ताऊजी हैं, वे हनुमान्मंदिरके पुजारी हैं तथा ऐसे मरीजोंका इलाज करते हैं। आप चाहो तो मैं आपको एवं प्रीतिको उनसे मिलवा सकती हूँ। मैंने कहा—'ठीक है, कल शनिवार है, हम तीनों ४-५ बजे शामको वहाँ चलेंगे। वहाँ जानेपर थोड़ी ही देरमें हमारा नम्बर आ गया। पण्डितजीने कुछ देखकर कहा कि 'इस बिटियाकी पहली सास पितृयोनिमें हैं। ये उनका श्राद्ध एवं बरसीका पिण्डदान गलत तिथिपर करते हैं, अतः उन्हें कपड़े एवं भोजन प्राप्त नहीं होता है। माताजीके कपड़े तार-तार हो रहे हैं, वे सिकुड़ी हुई एवं मुँह छुपाकर बैठी हुई हैं। सप्तमीके दिन उनका श्राद्ध कीजिये तथा अमावस्यापर उनको कुछ भेंट कीजिये, सब ठीक हो जायगा। उनके साथ एक और आत्मा भी है, जो बिटियाको परेशान कर रही है। मैंने उनको हाथ जोड़े तथा घर आ गयी।

मैं बचपनसे ही श्रीमद्भगवद्गीताका पाठ करती हूँ, जिससे मुझे बड़ी मानसिक शान्ति मिलती है तथा मैं प्रसन्न रहती हूँ। दूसरे दिन मैंने नित्य-क्रियाओंसे निबटकर नाश्ता, दूध, चाय आदि बनाकर सबको नाश्ता करवाया तथा स्वयं भी नाश्ता किया और मनमें विचार आया कि मैं इन आत्माओंके लिये गीताका पाठकर उन्हें उसका फल प्रदान करती हूँ, ताकि मेरी बेटी ठीक हो जाय। मैं पीछेके कमरेमें गयी, वहाँ बेटी डबल-बेडपर लेटी हुई थी और कुछ बड़बड़ा रही थी। मैं एक लोटा जल लेकर गयी तथा उसके पास बैठकर मन-ही-मन संकल्प करके कहा—हे आत्मा! आप जो भी हों, आपको नमस्कार है, आप मेरी बेटीको छोड़कर चली जायँ और फिर कभी भी इसको कष्ट मत दीजियेगा। मैं आपके लिये गीताके तीसरे एवं ग्यारहवें अध्यायका

पाठकर उसका पुण्यफल आपको अर्पित करती हूँ। यदि आपने कभी भी इसको तंग करनेकी कोशिश की तो इन अध्यायोंका पुण्य आपको कभी नहीं मिलेगा। ऐसा कहकर मैंने मनसे भगवान्‌का नाम लेकर ये दोनों अध्याय पढ़े एवं हाथमें थोड़ा-सा जल लेकर मनमें संकल्प करके उसका छींटा बेटीपर डाला एवं भगवान्‌को हाथ जोड़े, तभी मैंने एक सफेद-सी आकृतिको दरवाजेसे बाहर जाते देखा। उसके बाद मैंने बेटीकी तरफ देखा तो उसका चेहरा चमक रहा था। श्रीमद्भगवद्गीताके प्रभावसे मेरी बेटी ठीक हो गयी। एक-दो दिन बाद वह अपनी ससुराल चली गयी तथा अपनी सरकारी ड्यूटी (नर्स)-का कार्य सम्भाल लिया। उसके बादसे वह पूर्णरूपसे स्वस्थ चल रही है। ऐसा श्रीमद्भगवद्गीताका दिव्य प्रभाव है।—**श्रीमती कुमकुम दाधीच**

(२)

दार्शनिक इमर्सन, कार्लाइल और गीता

अमेरिकामें इमर्सन एक चर्चमें पादरी था और उसने रविवारको चर्चमें गीता पढ़ानी प्रारम्भ की। लोगोंने शिकायत की कि तुम्हें बाइबिल पढ़ानेको रखा गया है, तुम काफिरोंकी पुस्तक क्यों पढ़ा रहे हो? उसने कहा यदि तुम्हें Universal Bible चाहिये तो वह भगवद्गीता है। यदि आपको क्रिश्चियन बाइबिल चाहिये तो यह पड़ी रहने दो। उसने चर्चकी नौकरी त्याग दी, लेकिन भगवद्गीताको हृदयसे लगाया और सारे संसारमें भगवद्गीताका प्रचार शुरू किया। उस समय इंग्लैण्डमें एक बहुत बड़ा दार्शनिक हुआ था, उसका नाम था कार्लाइल। वह अंग्रेजीका बहुत बड़ा लेखक था। इंग्लैण्डमें कार्लाइल यूनिवर्सिटी है। एक बार इमर्सन कार्लाइलसे मिलने गया, वहाँ कार्लाइलने इमर्सनसे कहा—'मेरे मित्र! तुम डालरोंके देशसे आये हो। तुम मेरे लिये क्या उपहार लाये हो?' उसने कहा—'मुझे शर्मिन्दा मत करो। सांस्कृतिक दृष्टिसे हम दिवालिये हैं। हमारे पास अपना कुछ भी नहीं है। हमारी जाति यूरोपसे गयी है, धर्म हमारा यहूदियोंका दिया हुआ है, इजराइलसे गया हुआ है। इसलिये अमेरिकन नामसे अपना कुछ है ही नहीं, जो आपको हम कुछ दे सकें और इतना कहते-कहते उसकी आँखोंमें आँसू आ गये। कार्लाइल बोला—'अरे यार! मैंने उपहार माँगा और तुम आँसू बहाने लगे। तो तुमने मुझसे आज उपहार माँगा है तो आज मैं तुम्हें जीवनकी सबसे बड़ी दौलत बाँट रहा हूँ, जिसे मैं किसीको नहीं दे सकता था। वह मेरे लिये पावनतम और पवित्रतम वस्तु थी, पर आज तुमने उपहार माँगा तो दे रहा हूँ। उसने जेबसे भगवद्गीताकी पोथी निकाली। मेरे मित्र! गुरु थोरो प्रतिदिन प्रातःकाल गीताके अमृतजलसे स्नान करते थे, इस गीताका पाठ प्रतिदिन करते थे। गीताका पाठ करते हुए श्रद्धाके आँसुओंसे पवित्र हुई गीताकी पोथी मेरी जिन्दगीकी सबसे बड़ी दौलत थी। यही गीताकी पोथी आपको दे रहा हूँ। कार्लाइलने उसकी पीठपर हाथ रखा और कहा—'मेरे मित्र! जैसे लगता है कि तुम मेरे मनकी बात ताड़ गये हो। क्या तुम मुझे देनेके लिये गीता लाये हो? मैं तुझे देनेके लिये क्या लाया था? मैं भी तुझे देनेके लिये भगवद्गीता ही लाया हूँ और कार्लाइलने भी अपनी जेबसे भगवद्गीता निकाली और इमर्सनको दे दी। कार्लाइल इंग्लैण्डका सबसे बड़ा दार्शनिक, और इमर्सन अमेरिकाका सबसे बड़ा दार्शनिक! ये परस्पर मिलते हैं, इंग्लैण्डमें मिलते हैं और परस्पर गीता भेंट करते हैं।

यह घटना एक मैगजीनमें छपी और वह मैगजीन मसूरीके एक युवकको, जो नया-नया एम०ए० पास करके Philosophy के Lecturer के पदपर नियुक्त हुआ था, उसके हाथमें पड़ी। रातभर वह मैगजीन पढ़ता रहा। उसने पढ़ा इंग्लैण्डका सबसे बड़ा दार्शनिक और अमेरिकाका सबसे बड़ा दार्शनिक एक-दूसरेसे इंग्लैण्डमें मिलनेपर एक-दूसरेको भगवद्गीता भेंट करते हैं। तब हमें पाश्चात्य दर्शनसे क्या लेना है? जब पश्चिमवाले भी गीतापर मुग्ध हैं तो उसने पाश्चात्य दर्शनकी किताबोंको ताकपर रख दिया और गीताके स्वाध्यायमें लग गया। धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे....।

उस भगवद्गीताकी कृपासे वह हिन्दुत्वका, भारतीय संस्कृतिका सबसे बड़ा व्याख्याता और इस युगकी दार्शनिक मनीषाका मणिमुकुट बना। वह युवक था डॉ० राधाकृष्णन्। डॉ० राधाकृष्णन् भारतका राष्ट्रपति भी हुआ। उस राधाकृष्णन्के जीवनमें परिवर्तन करनेवाली है यह भगवद्गीता; उसको गीताने कितना महान् व्याख्याता बना दिया।

इस घटनाका प्रभाव भाई परमानन्दपर भी हुआ। वे कहते हैं—अपना विद्यार्थी-जीवन समाप्त करनेके बाद मुझे खयाल हुआ कि वह कौन-सी पुस्तक है, जिसे मैं अपने स्वाध्यायके लिये हर समय अपने साथ रख सकता हूँ। कार्लाइलकी लिखी किताब 'सारटर रिसार्टस्' ने मेरे दिलपर इतना गहरा असर डाला कि मैंने उसे अपना साथी बना लिया। कुछ समय गुजर गया। अब मुझे यह बात पढ़नेको मिली कि एक बार अमेरिकाका प्रसिद्ध दार्शनिक इमर्सन कार्लाइलसे मिलने गया। विदाके समय कार्लाइलने इमर्सनको भगवद्गीताकी एक प्रति उपहारस्वरूप भेंट की, इस घटनाने मेरे अन्दर परिवर्तन उत्पन्न किया। मैंने 'सारटर रिसार्टस्' को अलग रख दिया और उसकी जगह भगवद्गीताको अपने साथ कर लिया।

—डॉ० श्रीहरवंशलालजी ओबराय

(३)

बड़ोंका आशीर्वाद

सर चिन्तामणि देशमुख भारतके माने हुए अर्थशास्त्री हैं। ब्रिटिश राज्यकालमें वे रिजर्व बैंकके गवर्नर थे। इनसे पहले अर्थविभागके इतने ऊँचे पदपर किसी भी भारतीयकी नियुक्ति नहीं हुई थी। देशके स्वतन्त्र होनेपर श्रीजान मथाई और सर षण्मुखम् चेट्टीके बाद वे केन्द्रीय सरकारमें फाइनेन्स मेम्बर (अर्थसचिव) बनाये गये। एक बार मेरठके नागरिकोंद्वारा आयोजित एक स्वागत-समारोहमें बोलते हुए आपने अपने जीवनकी एक रोचक घटनाका वर्णन किया।

श्रीदेशमुखजीने कहा कि 'जब मैं फर्ग्यूसन कॉलेज पूनाका विद्यार्थी था, तब लोकमान्य तिलकने एक दिन हमारे प्रिन्सिपल महोदयसे कहा कि 'मुझे एक अर्थसम्बन्धी आवश्यक लेख लिखना है, आप अपने किसी होशियार छात्रको भेज दें, मैं जो बोलूँ, उसे वह ठीक-ठीक लिखता रहे।' प्रिन्सिपल महोदयने इस कार्यके लिये मुझे चुना और कहा कि 'आज सन्ध्यासमय लगभग पाँच बजे लोकमान्य तिलकजीके पास चले जाना और वे जो बोलें, उसे ठीक-ठीक लिखते रहना।' मैंने इसे अपना अहोभाग्य समझा और सगर्व तिलकजीके चरणोंमें पहुँचा। अकस्मात् उसी समय तिलकजीसे मिलने कुछ महानुभाव आ गये और लेख लिखानेके लिये उनके पास समय नहीं रहा। तिलकजी इससे खिन्न थे। मैंने कहा—'आप मुझे समझा दीजिये कि आप क्या लिखाना चाहते हैं। एक स्थूल-सी रूप-रेखा दे दीजिये। मैं स्वयं लेख तैयार कर लाऊँगा।' इसपर तिलकजी मुसकराये, पर मेरा मन रखनेके लिये उन्होंने अपना विषय और मुद्दे मुझे समझा दिये। अगले दिन मैं वह लेख तैयार करके उनकी सेवामें पहुँचा, जिसे पढ़कर वे बहुत ही प्रसन्न हुए और मेरे सिरपर हाथ फेरते हुए बोले—'जाओ, हमने तुम्हें आशीर्वाद दिया, तुम एक दिन भारतके फाइनेन्स मेम्बर बनोगे।' तिलकजीका यह आशीर्वाद मुझे बराबर स्मरण रहा; क्योंकि मैं जानता था कि महात्माओंका आशीर्वाद कभी निष्फल नहीं जाता और जब मैं रिजर्व बैंकका गवर्नर बन गया तो मैंने समझा कि अब लोकमान्यजीका आशीर्वाद पूरा हो गया; क्योंकि रिजर्व बैंकके गवर्नर और फाइनेन्स मेम्बरके पदमें कोई ऐसा विशेष अन्तर नहीं है और इसके बाद मैं इस आशीर्वादकी बात बिलकुल भूल गया। परंतु अब भारतसरकारका फाइनेन्स मेम्बर बन जानेके बाद मुझे फिर तिलकजीका आशीर्वाद याद आ गया कि यह मेरी भूल थी कि रिजर्व बैंककी गवर्नरीपर ही मैंने उनके आशीर्वादको पूरा हुआ समझ लिया था। महात्माओंका आशीर्वाद लगभग ही सत्य नहीं होता, वह तो अक्षरशः सत्य होता है।

मनन करने योग्य

क्रोध और दर्प पराभवका कारण होता है

भगवान् श्रीहरि गर्व-प्रहारी हैं, वे अपने जनोंका तनिक-सा भी अभिमान नहीं रखना चाहते; क्योंकि अभिमान देवता, मनुष्य, ऋषि-मुनि—सभीके पतनका कारण होता है। कृपानिधि भगवान् अपने भक्तोंपर विशेष स्नेह एवं ममत्व रखनेके कारण सभी प्रकारके कष्टों और दु:खोंके मूल कारण अभिमानको ही दूर कर देते हैं। श्रीरामचरितमानसमें गोस्वामीजी कहते हैं—

संसृति मूल सूलप्रद नाना । सकल सोकदायक अभिमाना॥
तेहि ते करहिं कृपानिधि दूरी । सेवक पर ममता अति भूरी॥

यहाँ ब्रह्मवैवर्तपुराणमें वर्णित अग्निदेवके अभिमान-भंगकी एक घटना प्रस्तुत है—

एक समयकी बात है। अग्निदेव सौ ताड़ोंके बराबर ऊँची और भयंकर लपटें उठाकर तीनों लोकोंको भस्म कर डालनेके लिये उद्यत हो गये। महर्षि भृगुने उन्हें शाप दिया था; इसलिये वे क्षोभ और क्रोधसे भरे थे। अपनेको तेजस्वी और दूसरोंको तुच्छ मानकर वे त्रिलोकीको भस्म करना चाहते थे। इसी बीचमें मायासे शिशुरूपधारी जनार्दन भगवान् विष्णु लीलापूर्वक वहाँ आ पहुँचे और सामने खड़े हो अग्निकी उस दाहिका शक्तिको उन्होंने हर लिया। तत्पश्चात् मन्द-मन्द मुसकराते हुए भक्तिसे मस्तक झुका वे विनयपूर्वक बोले।

शिशुने कहा—भगवन्! आप क्यों रुष्ट हैं? इसका कारण मुझे बताइये। व्यर्थ ही आप तीनों लोकोंको भस्म करनेके लिये उद्यत हुए हैं? भृगुजीने आपको शाप दिया है; अत: आप उनका ही दमन कीजिये। एकके अपराधसे तीनों लोकोंको भस्म कर डालना आपके लिये कदापि उचित नहीं है। ब्रह्माजीने इस विश्वकी सृष्टि की है, साक्षात् श्रीहरि इसके पालक हैं और भगवान् रुद्र संहारक। ऐसा ही क्रम है। जगदीश्वर शंकरके रहते हुए आप स्वयं जगत्को भस्म करनेके लिये क्यों उद्यत हुए हैं? पहले जगत्का पालन करनेवाले भगवान् विष्णुको जीतिये। उसके बाद इसका शीघ्रतापूर्वक संहार कीजिये।

ऐसा कहकर ब्राह्मणबालकने सामने पड़े हुए सरकण्डेके एक पत्तेको, जो बहुत ही सूखा हुआ था, हाथमें उठा लिया और उसे जलानेके लिये अग्निको दिया। सूखा ईंधन देख अग्निदेव भयानकरूपसे जीभ

लपलपाने लगे। उन्होंने अपनी लपटोंमें ब्राह्मणबालकको उसी तरह लपेट लिया, जैसे मेघोंकी घटासे चन्द्रमा छिप जाता है; परंतु उस समय न तो वह सूखा पत्ता जला और न उस शिशुका एक बाल भी बाँका हुआ। यह देख अग्निदेव उस बालकके सामने लज्जासे ठिठक गये। अग्निदेवका दर्प भंग करके वह शिशु वहीं अन्तर्धान हो गया तथा अग्निदेव अपनी मूर्तिको समेटकर डरे हुएकी भाँति अपने स्थानको चले गये।

यद्यपि अग्निदेवका वेदोंमें प्रधान देवताके रूपमें वर्णन किया गया है, वे देवताओंके लिये हव्य और पितरोंके लिये कव्यका वहन करते हैं। इतना ही नहीं, वे देवताओंमें सबसे आगे-आगे चलते हैं और युद्धमें सेनापतिका काम करते हैं, परंतु अभिमानके कारण उनका भी पराभव हुआ; अत: कल्याणकामी मनुष्यको किसी भी बातका अभिमान नहीं करना चाहिये।

॥ श्रीहरिः ॥

(भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और सदाचार-सम्बन्धी सचित्र मासिक पत्र)

'कल्याण'

-के ९३वें वर्ष (वि०सं० २०७५-७६, सन् २०१९ ई०)-के दूसरे अङ्कसे बारहवें अङ्कतकके

निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक विषय-सूची

(विशेषाङ्ककी विषय-सूची उसके आरम्भमें देखनी चाहिये, वह इसमें सम्मिलित नहीं है।)

निबन्ध-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१- अतिथिकी योग्यता नहीं देखनी चाहिये	सं०१०-पृ०३५
२- अति वाचालताका दुष्परिणाम (श्रीमती राजकुमारी मोर)	सं०१०-पृ०११
३- अनुकूलता और प्रतिकूलतामें प्रेमी भक्तकी अनुपम साधना (श्रीभीकमचन्दजी प्रजापति)	सं०११-पृ०३४
४- अद्भुत उदारता	सं०७-पृ०४१
५- अधिदेवता [कहानी] (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र')	सं०३-पृ०३३
६- अपनी ओर निहारो (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	सं०४-पृ०३८, सं०१०-पृ०३७
७- अपने उद्धारके लिये खास बातें (श्रीबरजोरसिंहजी).	सं०९-पृ०२१
८- अपने प्रति न्याय करो (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	सं०५-पृ०१९
९- 'अवधपुरी प्रभु आवत जानी' (श्रीअर्जुनलालजी बन्सल)	सं०४-पृ०२२
१०- असफलताकी कड़वाहटमें (ब्रह्मचारी श्रीत्र्यम्बकेश्वरचैतन्यजी महाराज, अखिलभारतवर्षीय धर्मसंघ)	सं०८-पृ०२३
११- आत्मघाती है बदलेकी भावना (श्रीसीतारामजी गुप्ता)	सं०७-पृ०२६
१२- आत्महत्या पाप है (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०५-पृ०८
१३- आदर्श माता कौसल्या (श्रीतुलसीरामजी शर्मा)	सं०६-पृ०२७
१४- आरोग्यदायी अश्विनीकुमार-स्तुति (डॉ० श्रीगोपेशकुमारजी शर्मा).	सं०७-पृ०२९
१५- ईश्वर-चर्चा (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०७-पृ०१२
१६- ईश्वराराधना और धार्मिकता क्या है ? (श्रीगजाननजी पाण्डेय)	सं०११-पृ०३१
१७- उदारतामें रस है (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	सं०७-पृ०४१
१८- एक विलक्षण विभूति—ब्रह्मर्षि श्रीश्री सत्यदेव [संत-चरित] (श्रीकैलाश पंकजजी श्रीवास्तव)	सं०३-पृ०३७
१९- एक सन्त जिनकी कृपासे डाकू भक्त बन गया (डॉ श्रीमती ज्ञानमती अवस्थी)	सं० १२-पृ० ३६
२०- औघड़ बाबा श्रीशंकर स्वामी (श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट).	सं०११-पृ०४१
२१- 'औषधियोंमें नहीं है स्वस्थ जीवनका सूत्र' (श्रीकरणसिंहजी चौहान, सेवानिवृत्त ब्रिगेडियर)	सं०६-पृ०२३
२२- कटु वाणीका त्याग करें (ब्रह्मचारी श्रीत्र्यम्बकेश्वरचैतन्यजी महाराज, अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ)	सं०६-पृ०१६
२३- करने-न करनेका अभिमान छोड़ दो (ब्रह्मलीन स्वामी श्रीअखण्डानन्द सरस्वतीजी महाराज)	सं०११-पृ०१०
२४- कर्मफल (डॉ० श्रीअनुज प्रतापसिंहजी)	सं०७-पृ०३८
२५- कर्मफल [जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज]	सं०९-पृ०१२
२६- कर्म और भाग्य (श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ वीतराग स्वामी श्रीदयानन्द गिरीजी महाराज)	सं०४-पृ०११
२७- कल्याण—	सं०२-पृ०५, सं०३-पृ०५, सं०४-पृ०५, सं०५-पृ०५, सं०६-पृ०५, सं०७-पृ०५, सं०८-पृ०५, सं०९-पृ०५, सं०१०-पृ०५, सं०११-पृ०५, सं०१२-पृ०५
२८- कल्याणका आगामी ९४वें वर्ष (सन् २०२० ई०)-का विशेषाङ्क 'बोधकथाङ्क'	सं०५-पृ०४९
२९- कामधेनुका सुपात्र (मानसमर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी उपाध्याय).	सं०३-पृ०११
३०- कामनाका त्याग (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)	सं०३-पृ०१९
३१- कार्तिकेयद्वारा देवसेनाका वरण [आवरणचित्र-परिचय].	सं०६-पृ०६
३२- कृपानुभूति—	सं०२-पृ०४७, सं०३-पृ०४६, सं०४-पृ०४६, सं०५-पृ०४४, सं०६-पृ०४६, सं०७-पृ०४६, सं०८-पृ०४६, सं०९-पृ०४६, सं०१०-पृ०४६, सं०९-पृ०४६, सं०१०-पृ०४६, सं११-पृ०४६, सं०१२-पृ०४२
३३- कृष्ण-मधुमंगल-विनोद (आचार्य श्रीरमाकान्तजी गोस्वामी)	सं०-५-पृ०११
३४- कृष्णवल्लभा श्रीराधा (श्रीमती शकुन्तलाजी अग्रवाल).	सं०४-पृ०१८
३५- 'कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्' (स्वामी श्रीविवेकानन्दजीके कतिपय प्रवचनोंके आधारपर) [प्रेषक—श्रीशरदचन्द्रजी श्रोत्रिय]	सं०८-पृ०१३
३६- क्या ईश्वरको पानेके बाद भी कुछ पाना शेष है ? (मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी उपाध्याय)	सं०४-पृ०९
३७- गीतोक्त अनन्य शरणागति (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	सं० १२-पृ०९
३८- गुरुतत्त्वका रहस्य (साधुवेषमें एक पथिक)	सं०७-पृ०१८
३९- गृहस्थाश्रममें गृहिणीका महत्त्व (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	सं०४-पृ०७
४०- गोग्रास-दानका अनन्त फल	सं०१२-पृ०३३
४१- गोचरभूमिकी गौरव-गाथा (श्रीगौरीशंकरजी गुप्त)	सं०२-पृ०४१
४२- गोपी-प्रेमका वैशिष्ट्य (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	सं०२-पृ०१२
४३- गोबर और गोमूत्रके तकनीकी उपयोग	सं०५-पृ०४०
४४- गो-महिमा	सं०८-पृ०४२
४५- गोमाताकी स्वामिभक्ति	सं०४-पृ०४२
४६- गोमाताद्वारा प्राणरक्षाकी दो घटनाएँ	सं० ११-पृ० ३९
४७- गोसेवासे भयंकर चर्मरोगसे मुक्ति मिली (श्रीरामसुहावनजी यादव)	सं०९-पृ०४२

४८- गोस्वामी तुलसीदासजीकी युगलोपासना (डॉ० श्रीरमेशमंगलजी वाजपेयी) ..... सं०१२-पृ०१६
४९- गौमाताकी बुद्धिमानी (रघुवंश त्रिपाठी) ..... सं०१०-पृ०३६
५०- जनकनन्दिनी सीताका वनगमन-आग्रह (श्रीजगदीश प्रसादजी गुप्ता) ..... सं०९-पृ०२७
५१- जब सारे सहारे जवाब दे देते हैं.... (श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) ..... सं०१२-पृ०२५
५२- जरासन्धकी कैदसे राजाओंकी मुक्ति [आवरणचित्र-परिचय] ..... सं०१२-पृ०८
५३- जरूरतमन्दकी मदद ..... सं०८-पृ०२८
५४- 'जाउँ कहाँ तजि चरन तुम्हारे' (डॉ० श्रीमृत्युंजयजी उपाध्याय) ..... सं०३-पृ०२८
५५- 'जिन खोजा तिन पाइयाँ' [कहानी] (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र') ..... सं०२-पृ०३८
५६- जीव-शिक्षा-सिद्धान्त (स्वामी श्रीहरिदासकृत अष्टादश पद)सं०११-पृ०२१, सं०१२-पृ०१९
५७- ज्योति प्रज्वलित हो गयी (श्रीबलविन्दरजी 'बालम'). सं०११-पृ०३२
५८- तुम मुझे देखा करो और मैं तुम्हें देखा करूँ (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ..... सं०५-पृ०७
५९- तुरीयावस्था (ब्रह्मलीन स्वामी श्रीदयानन्द 'गिरि'जी महाराज). ..... सं०६-पृ०१३
६०- तुलसीकी दृष्टिमें सच्चे सन्त और ढोंगी असन्त (श्रीअर्जुनलालजी बंसल) ..... सं०९-पृ०२२
६१- त्यागकी महिमा (प्रो० श्रीजमनालालजी बायती) ..... सं०६-पृ०३०
६२- दण्डी स्वामी श्रीकेवलाश्रमजी महाराज [संत-चरित] (श्रीआगेरामजी शास्त्री) ..... सं०८-पृ०३९
६३- दारुब्रह्म (भगवान् जगन्नाथ)-का प्राकट्य-रहस्य ..... सं०२-पृ०१७
६४- दिव्य दाम्पत्य ..... सं०९-पृ०१५
६५- दुःख क्यों हो? ..... सं०९-पृ०३७
६६- दुष्कर्म पराभव, अपमान और दुःखका कारण ..... सं०११-पृ०३८
६७- दूषित अन्नका प्रभाव ..... सं०९-पृ०४१
६८- दृढ़ संकल्प [प्रेरक कथा] (श्रीराजेशजी माहेश्वरी). .. सं०३-पृ०२६
६९- दोष भूलका परिणाम है (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) ..... सं०११-पृ०३७
७०- धर्मकी वेदीपर (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ..... सं०७-पृ०७
७१- नामधारी सिक्खोंकी गोभक्ति (संत श्रीनिधानसिंहजी आलिम). ..... सं०३-पृ०४१
७२- नाम-साधना (समर्थ सद्गुरु श्रीब्रह्मचैतन्यजी महाराज गोंदवलेकर) ..... सं०९-पृ०९, सं०१०-पृ०१४, सं०१२-पृ०१२
७३- नाम-स्मरण (समर्थ सद्गुरु श्रीब्रह्मचैतन्यजी महाराज गोंदवलेकर) ..... सं०११-पृ०१४
७४- निकुंज-रसका वह एकान्त रहस्य! (श्रीराजेन्द्ररंजनजी चतुर्वेदी) ..... सं०४-पृ०१४
७५- निन्दा महापाप (श्रीअगरचन्दजी नाहटा) ..... सं०८-पृ०३६
७६- निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक विषय-सूची ..... सं०१२-पृ०४७
७७- निर्दोष जीवन जगत्के लिये उपयोगी होता है [प्रेरणा-पथ] (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) ..... सं०६-पृ०४३
७८- नेक कमाईकी बरकत (श्रीनारायणदासजी बाजोरिया) ..... सं०९-पृ०२९
७९- पढ़ो, समझो और करो. सं०३-पृ०४७, सं०४-पृ०४७, सं०५-पृ०४५, सं०६-पृ०४७, सं०७-पृ०४७, सं०८-पृ०४७, सं०९-पृ०४७, सं०१०-पृ०४७, सं०११-पृ०४७, सं०१२-पृ०४३
८०- पतनके कारण ..... सं०११-पृ०२०
८१- परम तपस्वी श्रीशिवबाला योगीजी महाराज [सन्त-चरित—] (डॉ० श्रीउमेशचन्द्रजी जोशी) ..... सं०९-पृ०३८
८२- परिस्थितिका सदुपयोग [प्रेरणा-पथ] (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) ..... सं०८-पृ०४१
८३- 'पिबत भागवतं रसमालयम्' (गोलोकवासी श्रद्धेय पं० श्रीलालबिहारीजी मिश्र) ..... सं०३-पृ०१०
८४- पुरुषार्थ (श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ वीतराग स्वामी श्रीदयानन्द गिरिजी महाराज) ..... सं०३-पृ०१८
८५- 'प्रकट हुए प्रभु कारागृहमें कृष्ण अतुल ऐश्वर्य निधान' (श्रीअर्जुनकुमारजी बन्सल) ..... सं०८-पृ०१८
८६- प्रभुप्राप्तिके मार्गमें ब्रह्मचर्यपालनका महत्त्व (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ..... सं०१०-पृ०७
८७- प्रयागका कुम्भ एवं अर्धकुम्भ ..... सं०२-पृ०२५
८८- प्रलोभनके आगे न झुकिये (डॉ० श्रीरामचरणमहेन्द्रजी). .. सं०९-पृ०३२
८९- प्राणायामका मूल उद्देश्य (श्रीशिरीष शान्तारामजी कवडे) ..... सं०५-पृ०२४
९०- प्रेमका प्रभाव ..... सं०१०-पृ०१३
९१- प्रेम ही सर्वोपरि तत्त्व है (आचार्य श्रीगोविन्दरामजी शर्मा) ..... सं०८-पृ०३०
९२- प्रेमी भक्तके पाँच महाव्रत (श्रीभीकमचन्दजी प्रजापति) ... सं०४-पृ०२९
९३- बच्चोंके संस्कारपर बड़ोंके व्यवहारका प्रभाव (श्रीसीतारामजी गुप्ता) ..... सं०८-पृ०३२
९४- बस! दुःख अब और नहीं (श्रीताराचन्दजी आहूजा) .. सं०६-पृ०१८
९५- बुढ़ापा—जीवनका एक मीठा फल (श्रीमती कुशल गोगिया) ..... सं०१०-पृ०२३
९६- 'बोलै नहीं तो गुस्सा मरै' ..... सं०१०-पृ०१५
९७- ब्रह्मचर्य (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका). ..... सं०९-पृ०७
९८- भक्तके ऋणी भगवान् (ब्रह्मलीन जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्-पीठाधीश्वर स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज) ..... सं०७-पृ०१०
९९- भक्तिके चार आयाम (डॉ० शैलजाजी अरोड़ा) ..... सं०९-पृ०१९
१००- भगवत्कृपापर विश्वास कीजिये (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ..... सं०८-पृ०११
१०१- भगवती भुवनेश्वरी [आवरणचित्र-परिचय] ..... सं०१०-पृ०६
१०२- भगवती महिषासुरमर्दिनी [आवरणचित्र-परिचय] ..... सं०४-पृ०६
१०३- भगवती श्रीवाराही देवी (श्रीपरिपूर्णानन्दजी वर्मा) ..... सं०१२-पृ०३४
१०४- भगवती श्रीसीताजी [आवरणचित्र-परिचय] ..... सं०५-पृ०६
१०५- भगवती सीता तथा द्रौपदीके पूर्वजन्मका वृत्तान्त ..... सं०११-पृ०२८
१०६- भगवन्नाम-जपका विज्ञान (श्रद्धेय स्वामी श्रीत्रिभुवनदासजी महाराज) ..... सं०४-पृ०२६, सं०५-पृ०३०
१०७- भगवन्नाममय जीवन ..... सं०९-पृ०१०
१०८- भगवान् क्रूर कैसे हो सकता है? ..... सं०८-पृ०१४
१०९- भगवान्की लीला (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ..... सं०१०-पृ०१२
११०- भगवान्की लीला और मंगलविधान (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ..... सं०४-पृ०१०
१११- भगवान् श्रीकृष्णका दिव्य श्रीविग्रह (श्री जय जय बाबा). सं०२-पृ०८
११२- भाग्य-पुरुषार्थ-विवेक (ब्रह्मचारी श्रीत्र्यम्बकेश्वर चैतन्यजी महाराज, अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ) ..... सं०११-पृ०२४
११३- भारतीय संस्कृतिमें पर्यावरण-संरक्षण (श्रीशंकरलालजी माहेश्वरी) ..... सं०६-पृ०३३
११४- भोगवाद और आत्मवाद (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ..... सं०३-पृ०१३

११५- मनको संयत और एकाग्र करनेके उपाय
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ..... सं०३-पृ०७
११६- मनन करने योग्य—सं०३-पृ०५०, सं०४-पृ०५०, सं०५-पृ०४८, सं०६-पृ०५०, सं०७-पृ०५०, सं०८-पृ०५०, सं०९-पृ०५०, सं०१०-पृ०५०, सं०११-पृ०५०, सं०१२-पृ०४६
११७- मन, वाणी और कर्मके ऐक्यका महत्त्व
(आचार्य डॉ० श्रीरामेश्वर प्रसादजी गुप्त) ..... सं०४-पृ०१६
११८- महर्षि रमणकी मूक पशु-पक्षियोंके प्रति करुणा-भावना
(श्रीशिवकुमारजी गोयल) ..... सं०११-पृ०१५
११९- महर्षि वेदव्यास [आवरणचित्र-परिचय] ..... सं०७-पृ०६
१२०- महात्मा तैलंग स्वामी [संत-चरित]
(श्रीभुवनेश्वरप्रसादजी मिश्र 'माधव') ..... सं०४-पृ०४०
१२१- महान् तत्त्वज्ञ श्रीमद् राजचन्द्र [संत-चरित]
(श्रीहजारीमलजी बाँठिया) ..... सं०५-पृ०३४
१२२- महापुरुषोंके प्रति किये गये अपराधका परिणाम
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ..... सं०६-पृ०७
१२३- महाप्रलयके द्रष्टा : चिरजीवी काकभुशुण्डिजी
(डॉ० श्रीमुमुक्षुजी दीक्षित) ..... सं०६-पृ०२०
१२४- महाभारत-कथाका व्यापक विस्तार
(सुश्री डॉ० मोनाबालाजी). ..... सं०१२-पृ०३०
१२५- महाराज रघु और कौत्स [आवरणचित्र-परिचय] ..... सं०९-पृ०६
१२६- माँ [कहानी] (श्रीबलविन्दरजी 'बालम') ..... सं०७-पृ०३५
१२७- माँ विन्ध्यवासिनीकी स्तुति [कविता]
(डॉ० महेशजी पाण्डेय 'बजरंग') ..... सं०११-पृ०२३
१२८- माता-पिता ही परम देवता हैं (आचार्य डॉ० श्रीरामेश्वर-प्रसादजी गुप्त, एम०ए०, पी-एच०डी०) ..... सं०१०-पृ०२४
१२९- माधवका माधुर्य
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ..... सं०२-पृ०७
१३०- मानव-जीवनकी सफलताका राजमार्ग
(श्रीरामवल्लभजी बियाणी) ..... सं०५-पृ०३९
१३१- मितव्ययिताका आदर्श (श्रीरमाकान्तजी मिश्र) ..... सं०२-पृ०२३
१३२- मैं और मेरा जीवन (ब्रह्मचारी श्रीत्र्यम्बकेश्वरचैतन्यजी महाराज, अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ) ..... सं०१२-पृ०२२
१३३- मौन व्याख्यान..... सं०८-पृ०३८
१३४- मौनू बहुरानी [गोभक्ति-कथा]
(पं० श्रीरामस्वरूपदास पाण्डेय) ..... सं०६-पृ०४०
१३५- यह धन मातृभूमिके लिये है..... सं०८-पृ०३५
१३६- यह बिनती रघुबीर गुसाईं!
(पं० श्रीजानकीनाथजी शर्मा) ..... सं०५-पृ०१५
१३७- युगलसरकार-प्रार्थना [पद्मपुराण] ..... सं०२-पृ०३४
१३८- योगदृष्टिकोण में प्राणायाम
(डॉ० श्रीइन्द्रमोहनजी झा 'सच्चन')— ..... सं० १०-पृ० १७
१३९- रहस्यमयी वार्तामें श्रीराधामाधव
(ब्रह्मलीन स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) ..... सं०२-पृ०१३
१४०- 'राधा! हम तुम दोउ अभिन्न' [आवरणचित्र-परिचय]. . सं०२-पृ०६
१४१- रामसखा निषादराज (प्रो० श्री एस०एन० सक्सेनाजी) ..... सं०७-पृ०१९
१४२- रुपया मिला और भजन छूटा ..... सं०९-पृ०३४
१४३- लक्ष्मीजीका स्वयंवर [आवरणचित्र-परिचय] ..... सं०११-पृ०६
१४४- लालसा और विश्राम [प्रेरणा-पथ—]
(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) ..... सं०९-पृ०३६
१४५- लीलामयका रुदन-नाट्य [आवरणचित्र-परिचय] ..... सं०८-पृ०६
१४६- वास्तविक आनन्दके लिये क्या करें?
(श्रीसीतारामजी गुप्ता) ..... सं०५-पृ०२२
१४७- विद्यासागरकी दयालुता ..... सं०७-पृ०२८
१४८- विपत्तियाँ एवं मुसकराहट (ब्रह्मचारी श्रीत्र्यम्बकेश्वर-चैतन्यजी महाराज, अखिलभारतवर्षीय धर्मसंघ) ..... सं०७-पृ०२४
१४९- विलक्षण प्रेम और विलक्षण कृपा
(श्रीप्रमोदकुमारजी चट्टोपाध्याय) ..... सं०२-पृ०२६
१५०- विवाहित स्त्रियोंके कर्तव्य
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ..... सं०८-पृ०७
१५१- विश्वम्भर सबको सँभालता है [प्रेरक-प्रसंग] ..... सं०८-पृ०२२
१५२- विश्वासघातका दण्ड ..... सं०११-पृ०२७
१५३- 'वृद्ध माता-पिताकी सेवासे बढ़कर कोई तीर्थ नहीं'
(श्रीअर्जुनलालजी बंसल) ..... सं०१०-पृ०२२
१५४- वृन्दावनका श्रीराधारमणलाल मंदिर
(डॉ० श्रीभागवतकृष्णजी नांगिया) ..... सं०२-पृ०४३
१५५- वेदोंके महावाक्य (डॉ० श्री के०डी० शर्मा) ..... सं०८-पृ०२५
१५६- व्रजमें होली खेलत राधा-कृष्ण
(श्रीउमेशप्रसादसिंहजी) ..... सं०३-पृ०२३
१५७- व्रतोत्सव-पर्व—
चैत्रमासके व्रतपर्व सं०२-पृ०४६, वैशाखमासके व्रतपर्व सं०३-पृ०४५, ज्येष्ठमासके व्रतपर्व सं०४-पृ०४५, आषाढ़मासके व्रतपर्व सं०५-पृ०४३, श्रावणमासके व्रतपर्व सं०७-पृ०४५, भाद्रपदमासके व्रतपर्व सं०८-पृ०४५, आश्विनमासके व्रतपर्व सं०९-पृ०४५, कार्तिकमासके व्रत-पर्व सं०१०-पृ०४०, मार्गशीर्षमासके व्रतपर्व सं०११-पृ०४४, पौषमासके व्रतपर्व सं०११-पृ०४५, माघमासके व्रतपर्व सं०१२-पृ०४०, फाल्गुनमासके व्रतपर्व सं०१२-पृ०४१
१५८- शबरी एवं गीधराजकी महानता
(मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी उपाध्याय) ..... सं०६-पृ०८
१५९- शबरीजीके फलोंकी मिठास
(मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी उपाध्याय) ..... सं०७-पृ०१४
१६०- शरणागति और प्रेम (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ..... सं०११-पृ०७
१६१- शरीरको कैसे निरोग रखा जाय?
(श्रीरामचन्द्रजी वैरागी) ..... सं०३-पृ०३२
१६२- शत्रुको मित्र बना लेना ही बुद्धिमानी है..... सं०११-पृ०१९
१६३- शुद्धि और शृंगार (साधुवेषमें एक पथिक) ..... सं०२-पृ०१५
१६४- श्रद्धा-विश्वासपूर्वक काशीवासका फल
(श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) ..... सं०२-पृ०२०
१६५- श्रीकृष्ण-अष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्..... सं०४-पृ०१९
१६६- श्रीकृष्ण-लीलानुकरण हानिकारक (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसाद पोद्दार) ..... सं० २-पृ०१०
१६७- श्रीकृष्णके वामांशसे मूल प्रकृति श्रीराधाका प्राकट्य [आवरणचित्र-परिचय] ..... सं०३-पृ०६
१६८- श्रीजानकीजीवनाष्टकम्..... सं०३-पृ०३०
१६९- श्रीनिम्बार्क-सम्प्रदायमें युगलतत्त्व (गोस्वामी श्रीविष्णुकान्तजी महाराज, निम्बार्कपीठ, प्रयाग) ..... सं०३-पृ०२१
१७०- श्रीभगवन्नाम-जपकी शुभ सूचना ..... सं०१०-पृ०४१
१७१- श्रीभगवन्नामजपके लिये विनीत प्रार्थना..... सं०१०-पृ०४४
१७२- श्रीब्रह्मचैतन्य गोंदवलेकरजी महाराज [संत-चरित]
(श्री के०वी० बेलसरेजी) ..... सं०६-पृ०३६
१७३- श्रीराधा-अष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्..... सं०२-पृ०५०
१७४- श्रीराधाजीका 'आनन्दचन्द्रिका' नामक स्तोत्र ..... सं०२-पृ०४०
१७५- श्रीराधामाधवके परम त्यागी भक्त गोस्वामी रघुनाथदास [संत-चरित] ..... सं०२-पृ०३५
१७६- श्रीराधा-माधवकी मधुर गोदोहन-लीला ..... सं०५-पृ०९
१७७- श्रीराधा-स्वरूप-तत्त्वका स्मरण (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ..... सं०७-पृ०१२

१७८- श्रीरामचरितमानस—एक महान् कविकी अद्भुत कृति (आचार्य डॉ० श्रीकेशवरामजी शर्मा) ..... सं०११-पृ०१८
१७९- श्रीराम-निर्भरा भक्ति (मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी उपाध्याय) ..... सं०८-पृ०१०
१८०- श्रीवृन्दावन तो मेरा घर है ..... सं०७-पृ०११
१८१- श्रीवृन्दावन-महिमा ..... सं०३-पृ०२७
१८२- श्रीसमर्थ-शिष्या वेणाबाई (वेणास्वामी) (सौ० मधुवन्ती मकरन्द मराठे) ..... सं०१०-पृ०३१
१८३- संत-वचनामृत (वृन्दावनके गोलोकवासी संत पूज्य श्रीगणेशदासजी भक्तमालीके उपदेशपरक पत्रोंसे) ..... सं०३-पृ०३१, सं०४-पृ०३३, सं०६-पृ०२६, सं०७-पृ०४२, सं०८-पृ०२९, सं०९-पृ०३५, सं०१०-पृ०३०, सं०११-पृ०३०, सं० १२-पृ० २९
१८४- संत-स्मरण (परम पूज्य देवाचार्य श्रीराजेन्द्रदासजी महाराजके गीताभवन, ऋषिकेशमें हुए प्रवचनसे साभार) ..... सं०३-पृ०२५, सं०४-पृ०२५, सं०५-पृ०२१, सं०६-पृ०३२, सं०७-पृ०३४, सं०८-पृ०२१, सं०९-पृ०३१, सं०१०-पृ०२६, सं०११-पृ०२३, सं०१२-पृ०२१
१८५- संन्यासी और स्त्री (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ..... सं०६-पृ०१०
१८६- सच्चिदानन्दमयी योगशक्ति—श्रीराधा (डॉ० श्रीकृष्णवल्लभजी दवे) ..... सं०२-पृ०१६
१८७- सत्कर्म करनेमें सावधानी (मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी उपाध्याय) ..... सं०५-पृ०१०
१८८- सत्संगतिसे लाभ और कुसंगतिसे हानि (श्रीबरजोरसिंहजी) ..... सं०५-पृ०१८
१८९- सत्संग बड़ा है या तप (श्रीगजाननजी पाण्डेय) ..... सं०७-पृ०१७
१९०- सत्यका मूल्य ..... सं०८-पृ०२०
१९१- सदा दीवाली संतकी (स्वामीजी श्रीकृष्णानन्दजी महाराज) ..... सं०१०-पृ०१०
१९२- सफलताका सूत्र—धैर्य (डॉ० श्रीगोपाल दामोदरजी फेगड़े) ..... सं०४-पृ०२०
१९३- सब कुछ भगवान्‌की पूजाके लिये हो (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ..... सं०९-पृ०११
१९४- सर्वोच्च न्यायलयका स्वागतयोग्य ऐतिहासिक निर्णय (-राधेश्याम खेमका) ..... सं० १२-पृ० ६
१९५- साधकोंके प्रति— अनुभवके आदरसे कल्याण सं०४-पृ०१२, आत्मोद्धारके लिये चेतावनी सं०५-पृ०१२, सब नाम-रूपोंमें एक ही भगवान् सं०६-पृ०१४, नाशवान् पदार्थोंसे प्रीति निरर्थक सं०७-पृ०१६, भगवद्भक्तिका रहस्य सं०८-पृ०१५, भगवान्‌के साथ अपनापन रखें सं०९-पृ०१६, मैं भगवान्‌का हूँ सं०१०-पृ०१६, शरीर नहीं, परमात्मा अपने हैं सं०११-पृ०१६, प्राप्त परिस्थितिका सदुपयोग करो सं०१२-पृ०१४ (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)।
१९६- साधकोपयोगी उपदेशामृत (गोलोकवासी सन्त श्रीगयाप्रसादजी महाराज) सं०७-पृ०२३, सं०८-पृ०३४, सं०९-पृ०२४, सं०१०-पृ०२१
१९७- साधन कैसे करें? (ब्रह्मलीन स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) ..... सं०१२-पृ०१०
१९८- साधनामें बाधक रोग और ऋण (साधुवेषमें एक पथिक) ..... सं०९-पृ०१३
१९९- साधनोपयोगी पत्र —सं०२-पृ०४४, सं०३-पृ०४३, सं०४-पृ०४३, सं०५- पृ०४१, सं०६-पृ०४४, सं०७-पृ०४३, सं०८-पृ०४३, सं०९-पृ०४३, सं०१०-पृ०३८, सं०११-पृ०४२, सं०१२-पृ०३८
२००- सिद्धान्तको लेकर मत लड़ो (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ..... सं०१२-पृ०११
२०१- सुखकी खोज (श्रीविष्णुदयालजी वार्ष्णेय 'बजाज') .... सं०४-पृ०३४
२०२- सुख-दुःखकी तहमें (ब्रह्मचारी श्रीत्र्यम्बकेश्वरचैतन्यजी महाराज, अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ) ..... सं०१०-पृ०२७
२०३- हम क्या करें? (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) ..... सं०३-पृ०३५
२०४- हमारा कल्याण—केवल भगवत्कृपासे (श्रीघनश्यामदासजी मोदानी) ..... सं०७-पृ०३२
२०५- 'हरि' कीर्तनकी महिमा ..... सं०१२-पृ०१५
२०६- 'ही' और 'भी'में सन्तुलन (ब्रह्मचारी श्रीत्र्यम्बकेश्वरचैतन्यजी महाराज, अखिलभारतवर्षीय धर्मसंघ) ..... सं०९-पृ०२५

पद्य-संकलन

१- 'कृष्ण हैं प्रशंसनीय' (पं० श्रीशंकरलालजी गौड़ 'शम्भूकवि') ..... सं०५-पृ०७
२- 'कैसे तेरे पास भिजाऊँ' (श्रीमती कृष्णाजी मजेजी) ..... सं०४-पृ०३७
३- जगत मुसाफिरखाना (श्रीगेंदनलालजी कन्नौजिया) ..... सं०३-पृ०२०
४- बालकोंके लिये सात कर्तव्य (श्रीलक्ष्मीनारायणजी मूँघड़ा) ..... सं० १०-पृष्ठ २९
५- भगवान् शिवके मांगलिक वरवेशकी एक झाँकी (श्रीशिवकुमारसिंहजी 'शिवम्') ..... सं०३-पृ०३६
६- महारास-लीला (श्रीरामकुमारजी गुप्त) ..... सं०६-पृ०१५
७- 'मैं परमप्रभाका लघुकण हूँ' (श्रीसनातन कुमारजी वाजपेयी) ..... सं०६-पृ०२५
८- राधामाधव-दोहावली (श्री देवीचरण जी पाण्डेय)सं० ७-पृ० ४०
९- 'शारदे! चरणकमल रज दे!' (श्रीओझेलालजी शिववेदी, एम०ए०, साहित्यरत्न) .. सं०३-पृ०२४

संकलित

१- अष्टगणपतिस्थान-स्मरण ..... सं०९-पृ०३
२- आदिदेव भगवान् सूर्यनारायणको नमस्कार ..... सं०११-पृ०३
३- गोवर्धन-धारण ..... सं०१०-पृ०३
४- जय शंकर-गौरी-गणपति ..... सं०६-पृ०३
५- नाम-जपकी महिमा ..... सं०१०-पृ०४३
६- निकुंजलीलाके दर्शनाधिकारी ..... सं०५-पृ०१४
७- भगवान् श्रीकृष्णका अर्जुनको प्रबोधन ..... सं०१२-पृ०३
८- भगवान् नरसिंहको नमस्कार है! ..... सं०३-पृ०३
९- भाण्डीर-वनमें नन्दजीद्वारा श्रीराधासे प्रार्थना ..... सं०२-पृ०३
१०- भारतभूमिकी महिमा ..... सं०८-पृ०३
११- राधाजीद्वारा माधवके अपूर्ण चित्रांकनका रहस्य ..... सं०२-पृ०१९
१२- वनपथपर राम, सीता और लक्ष्मण ..... सं०४-पृ०३
१३- वृषभानुकिसोरीकी दिव्य छटा ..... सं०२-पृ०३७
१४- श्रीबदरीनाथ-स्तुति ..... सं०५-पृ०३
१५- श्रीबलभद्र, सुभद्रा एवं जगन्नाथजीकी प्रार्थना ..... सं०७-पृ०३

गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित—भगवान्‌के विभिन्न स्वरूपोंके महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹
	भगवान् श्रीगणपति	
657	श्रीगणेश-अङ्क	१८०
2024	श्रीगणेशस्तोत्ररत्नाकर	४०
	भगवान् शिव	
2223	श्रीशिवमहापुराण-सटीक, खं.-१	३००
2224	श्रीशिवमहापुराण-सटीक, खं.-२	३००
1468	सं० शिवपुराण (विशिष्ट सं०)	२८०
789	सं० शिवपुराण	२३०
1985	लिंगमहापुराण-सटीक	२२०
2020	शिवमहापुराणमूलमात्रम्	२७५
1417	शिवस्तोत्ररत्नाकर	३५
1627	रुद्राष्टाध्यायी (सानुवाद)	३५
1954	शिव-स्मरण	१०
563	शिवमहिम्नःस्तोत्र	५
228	शिवचालीसा (लघु आकारमें भी)	४
230	अमोघ शिवकवच	४
	भगवान् विष्णु	
48	श्रीविष्णुपुराण (सटीक)	१५०
1364	श्रीविष्णुपुराण (सटीक)(केवल हिन्दी)	१२०
819	श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् (शांकरभाष्य)	३५
1801	,, (हिन्दी-अनुवादसहित)	१०
225	गजेन्द्रमोक्ष	४
229	श्रीनारायणकवच	४
1367	श्रीसत्यनारायण-व्रतकथा	१५
	भगवान् श्रीकृष्ण	
571	श्रीकृष्णलीला-चिन्तन	१८०
517	गर्ग-संहिता	१६५
1927	जीवन-संजीवनी	४५
555	श्रीकृष्णमाधुरी	४०
62	श्रीकृष्णबालमाधुरी	३५
547	विरह-पदावली	३०
864	अनुराग-पदावली	४०
49	श्रीराधा-माधव-चिन्तन	१००
50	पद-रत्नाकर	११०
1862	श्रीगोपालसहस्रनामस्तोत्र (हिन्दी-अनुवाद)	१७
1748	संतानगोपालस्तोत्र	८
	भगवान् श्रीराम	
574	योगवासिष्ठ	१८०
103	मानस-रहस्य, सजिल्द	७०
231	रामरक्षास्तोत्र	४
	श्रीहनुमान्‌जी	
42	हनुमान-अङ्क—परिशिष्टसहित	१५०
185	भक्तराज हनुमान्	१०
112	हनुमान-बाहुक	५
	महाशक्ति भगवती	
1897	श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण-सटीक दो खण्डोंमें सेट	५००
1898		
1133	सं० देवीभागवत	२६५
41	शक्ति-अङ्क	२००
1774	श्रीदेवीस्तोत्ररत्नाकर	४०
2003	शक्तिपीठदर्शन	२०
	भगवान् सूर्य	
791	सूर्याङ्क	१५०
211	आदित्यहृदयस्तोत्र	५

माघ-मेला प्रयाग (सन् २०२०)

श्रद्धालुओंको चाहिये कि पौष शुक्ल पूर्णिमा (१० जनवरी, २०२० ई०)-से माघ शुक्ल पूर्णिमा (९ फरवरी, २०२० ई०)-तक पूरे एक मासतक कल्पवासी बनकर प्रयागमें रहें और श्रद्धा-भक्तिपूर्वक नित्यप्रति पुण्यतोया त्रिवेणीमें स्नान-लाभ लेते हुए धर्मानुष्ठान, सत्सङ्ग तथा दान-पुण्य करें—

माघ-मेला प्रयाग क्षेत्रमें विशेष पुस्तक-स्टॉल लगानेका विचार है।

गीता-दैनन्दिनी (सन् २०२०) अभी उपलब्ध है—मँगवानेमें शीघ्रता करें।

पूर्वकी भाँति सभी संस्करणोंमें सुन्दर बाइंडिंग तथा सम्पूर्ण गीताका मूल-पाठ, बहुरंगे उपासनायोग्य चित्र, प्रार्थना, कल्याणकारी लेख, वर्षभरके व्रत-त्योहार, विवाह-मुहूर्त, तिथि, वार, संक्षिप्त पञ्चाङ्ग, रूलदार पृष्ठ आदि।

पुस्तकाकार—विशिष्ट संस्करण (कोड 1431)—दैनिक पाठके लिये गीता-मूल, हिन्दी-अनुवाद, मूल्य ₹ ८५
बँगला (कोड 1489), ओड़िआ (कोड 1644), तेलुगु (कोड 1714) प्रत्येकका मूल्य ₹ ८५

पुस्तकाकार— सुन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड 503)—गीताके मूल श्लोक एवं सूक्तियाँ मूल्य ₹ ७०

पॉकेट साइज— सुन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड 506)— गीता-मूल श्लोक, मूल्य ₹ ४०

अब उपलब्ध

गीता-माधुर्यम् (कोड 679) स्वामी रामसुखदासजी—प्रस्तुत पुस्तकमें संस्कृत भाषामें गीताका अध्ययन करनेवालोंके लिये प्रश्नोत्तरकी रोचक शैलीमें संक्षेपमें संपूर्ण गीताका भावार्थ प्रकाशित किया गया है। मूल्य ₹ २० । हिन्दी (कोड 388) मूल्य ₹ २०, गुजराती (कोड 392) मूल्य ₹ १७, मराठी (कोड 39) मूल्य ₹ १५, बँगला (कोड 395) मूल्य ₹ १५, तमिल (कोड 389) मूल्य ₹ २५, तेलुगु (कोड 1028) मूल्य ₹ २५, असमिया (कोड 624) मूल्य ₹ १५, कन्नड (कोड 390) मूल्य ₹ १५, ओड़िआ (कोड 754) मूल्य ₹ १२, अंग्रेजी (कोड 487) मूल्य ₹ १५ भी।

प्र० ति० 20-11-2019
रजि० समाचारपत्र—रजि०नं० 2308/57 पंजीकृत संख्या—NP/GR–13/2017–2019
LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT | LICENCE No. WPP/GR–03/2017–2019

पाठकोंके लिये आवश्यक सूचना

1. 'कल्याण' एवं 'गीताप्रेस-पुस्तक-बिक्री-विभाग' की व्यवस्था अलग-अलग है। अत: केवल कल्याणके लिये कल्याण विभागको एवं पुस्तकोंके लिये पुस्तक-बिक्री-विभागको पत्र तथा मनीऑर्डर आदि अलग-अलग भेजना चाहिये। पुस्तकोंके ऑर्डर, डिस्पैच अथवा मूल्य आदिकी जानकारीके लिये पुस्तक प्रचार-विभागके फोन (0551) 2331250, 2334721 नम्बरोंपर सम्पर्क करें।

2. कल्याणके पाठकोंकी सुविधाके लिये कल्याण-कार्यालयमें दो फोन 09235400242/09235400244 उपलब्ध हैं। इन नम्बरोंपर प्रत्येक कार्य-दिवसमें दिनमें 9:30 बजेसे 5.30 बजेतक सम्पर्क कर सकते हैं अथवा kalyan@gitapress.org पर e-mail भेज सकते हैं। इसके अतिरिक्त नं० 9648916010 पर SMS एवं WhatsApp की सुविधा भी उपलब्ध है।

3. कल्याणके सदस्योंको मासिक अङ्क साधारण डाकसे भेजे जाते हैं। अङ्कोंके न मिलनेकी शिकायतें बहुत अधिक आने लगी हैं। सदस्योंको मासिक अङ्क भी निश्चित रूपसे उपलब्ध हो, इसके लिये **वार्षिक सदस्यता-शुल्क ₹250 के अतिरिक्त ₹200 देनेपर मासिक अङ्कोंको भी रजिस्टर्ड डाकसे भेजनेकी व्यवस्था की गयी है। इस सुविधाका लाभ उठाना चाहिये।**

4. कल्याणके मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर नि:शुल्क पढ़ सकते हैं।

'कल्याण' के पुनर्मुद्रित उपलब्ध विशेषाङ्क

कोड	विशेषाङ्क	मूल्य ₹	कोड	विशेषाङ्क	मूल्य ₹	कोड	विशेषाङ्क	मूल्य ₹
41	शक्ति-अङ्क	२००	1133	सं० श्रीमद्देवीभागवत	२६५	584	सं० भविष्यपुराण	१८०
616	योगाङ्क (परिशिष्टसहित)	२८०	789	सं० शिवपुराण	२३०	1131	कूर्मपुराण—सानुवाद	१५०
636	तीर्थाङ्क	२३०	631	सं० ब्रह्मवैवर्तपुराण	२३०	1044	वेद-कथाङ्क-परिशिष्टसहित	२००
604	साधनाङ्क	२५०	653	गोसेवा-अङ्क	१३०	1132	धर्मशास्त्राङ्क	१५०
1773	गो-अङ्क	१९०	1135	भगवन्नाम-महिमा और प्रार्थना-अङ्क	१६०	1189	सं० गरुडपुराण	१७५
44	संक्षिप्त पद्मपुराण	२८०				1592	आरोग्य-अङ्क	२२५
539	संक्षिप्त मार्कण्डेयपुराण	१००	572	परलोक-पुनर्जन्माङ्क	२२०	1610	महाभागवत (देवीपुराण)	१३०
1111	संक्षिप्त ब्रह्मपुराण	१५०	517	गर्ग-संहिता	१६५	1793	श्रीमद्देवीभागवताङ्क-पूर्वार्द्ध	१००
43	नारी-अङ्क	२४०	1113	नरसिंहपुराणम्-सानुवाद	१००	1842	,, ,, उत्तरार्ध	१००
659	उपनिषद्-अङ्क	२३०	1362	अग्निपुराण	२२५	1985	श्रीलिङ्गमहापुराणाङ्क-सानुवाद	२२०
279	सं० स्कन्दपुराण	३५०	1432	वामनपुराण-सानुवाद	१५०			
40	भक्त-चरिताङ्क	२५०	557	मत्स्यमहापुराण (सानुवाद)	३००	2066	श्रीभक्तमाल-अङ्क	२५०
1183	सं० नारदपुराण	२२०	657	श्रीगणेश-अङ्क	१८०	1980	ज्योतिषतत्त्वाङ्क	१५०
667	संतवाणी-अङ्क	२३०	42	हनुमान-अङ्क (परिशिष्टसहित)	१५०	2125	श्रीशिवमहापुराणाङ्क-पूर्वार्ध	१४०
587	सत्कथा-अङ्क	२३०	1361	सं० श्रीवाराहपुराण	१२०	2154	,, ,, -उत्तरार्ध	१४०
574	संक्षिप्त योगवासिष्ठ	१८०	791	सूर्याङ्क	१५०	2235	श्रीराधामाधव-अङ्क	१४०

प्रत्येक विशेषाङ्कपर डाकखर्च ₹ ७० अतिरिक्त।

e-mail : **booksales@gitapress.org**—थोक पुस्तकोंसे सम्बन्धित सन्देश भेजें।
Gita Press web : **gitapress.org**—सूची-पत्र एवं पुस्तकोंका विवरण पढ़ें।
gitapressbookshop.in से गीताप्रेसकी खुदरा पुस्तकें Online कूरियरसे/डाकसे मँगवायें।